• वर्ष ६५ • अंक १८ • मूल्य १२० सितम्बर (द्वितीय) २०२३

पाक्षिक

परोपकारी

महर्षि दयानन्द सरस्वती

परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानंद आर्ष गुरुकुल ऋषि उद्यान अजमेर में नवीन ब्रह्मचारियों का उपनयन एवं वेदारम्भ संस्कार

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुखपत्र

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।

वर्ष : ६५ **अंक :** १८

दयानन्दाब्दः १९९

विक्रम संवत् - भाद्रपद शुक्ल २०८०

कलि संवत् - ५१२४

सृष्टि संवत् - १,९६,०८,५३,१२४

सम्पादक

डॉ. वेदपाल

प्रकाशक- परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर- ३०५००१

दूरभाषः ०१४५-२४६०१६४

०८८९०३१६९६१

मुद्रक-देवमुनि-भूदेव उपाध्याय वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

७७४२२२९३२७

परोपकारी का शुल्क

भारत में

एक वर्ष-४०० रु.

पाँच वर्ष-१५०० रु.

आजीवन (२० वर्ष) -६००० रु.

एक प्रति - २०/- रु.

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०

०७८७८३०३३८२

ऋषि उद्यान : ०१४५-२९४८६९८

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

सितम्बर द्वितीय, २०२३

अनुक्रम

०१. शिक्षा : वर्तमान परिप्रेक्ष्य	सम्पादकीय	०४
०२. वैदिक सोच विचार	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	०६
०३. श्री स्वामी सच्चिदानन्द जी....	श्री भावेश मेरजा	१०
* संस्कार-विधि संवाद गोष्ठी २१-२३ सितम्बर २०२३		१९
०४. ज्ञान सूक्त-०१	डॉ. धर्मवीर	२०
०५. संस्था समाचार	श्री ज्ञानचन्द	२३
* ऋषि मेला-२०२३ हेतु दुकान (स्टॉल) आवंटन		२५
* परोपकारिणी सभा के आगामी शिविर व कार्यक्रम		२५
* सप्तदिवसीय राष्ट्रीय वैदिक-स्वर-सन्धान कार्यशाला		२६
* १४० वाँ ऋषि बलिदान समारोह		२९
* वेदगोष्ठी-२०२३		३१
* योग-साधना एवं स्वाध्याय शिविर		३३

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

शिक्षा : वर्तमान परिप्रेक्ष्य

मनुष्य के कल्याण का पथ प्रशस्त करने में शिक्षा की भूमिका निर्विवाद रूप से प्रथम स्थानी है। शिक्षा का अभिप्राय है – जीवन को उच्च नैतिक मूल्यों से संवर्धित करते हुए सभ्य सामाजिक बनाना। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए समय – समय पर युगानुकूल पद्धतियों के माध्यम से सामयिक विषयों का शिक्षण प्रदान किया जाता है।

भौतिक विज्ञान के साथ – साथ रासायनिक एवं चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में होने वाले नित नवीन आविष्कारों के कारण इन विषयों के अध्ययन के प्रति विशेष अभिरुचि दिनानुदिन बढ़ रही है। मानव जीवन के लिए अत्युपयोगी होने के साथ ही सामाजिक प्रतिष्ठा तथा आर्थिक समृद्धि भी इन विषयों के शिक्षण के साथ जुड़ी हुई है। इस क्षेत्र में किए जाने वाले प्रयत्न निश्चय ही अतिमहत्त्वपूर्ण हैं। समादरणीय भी हैं। किन्तु इस सन्दर्भ में कुछ बिन्दु विचारणीय भी हैं –

१. नैतिक मूल्य – शिक्षा साहित्यिक विषयों से सम्बद्ध हो अथवा विज्ञान – (इसमें चिकित्सा एवं कृषि भी सम्मिलित हैं।) विषयों से ।ज्ञान – विज्ञान के प्रसार का स्थान केवल शाब्दिक अथवा कुछ प्रयोगों से बढ़कर व्यक्ति के नैतिक जीवन में गुणात्मक परिवर्तन – परिवर्धन से जुड़ा होना अपेक्षित है।

वर्तमान में व्यक्ति के जीवन से सामाजिकता / सभ्यता का ह्रास चिन्ता का विषय होना ही चाहिए। वैयक्तिक जीवन में कर्त्तव्यनिष्ठा, सहिष्णुता, नैतिक मूल्यों के प्रति उदासीनता का ह्रास चिन्तनीय है। उच्च शिक्षित होने के बावजूद छोटी – छोटी बातों को लेकर उलझ जाना, बहुत ही सामान्य बात पर अपने निकटस्थ साथी या मित्र पर गोली चला देना अथवा चाकू से प्रहार करना जैसी घटनाएँ बढ़ती जा रही हैं। साथ बैठकर शराब जैसे पदार्थों का सेवन करते हुए असभ्य भाषा का प्रयोग जिस प्रकार बढ़ रहा है, वह शिक्षा की प्रासंगिकता पर प्रश्न खड़े करता है। साथ ही बढ़ती अर्थ लिप्सा भी अनेक सामाजिक समस्याओं को खाद – पानी देने का काम कर रही है। अल्पशिक्षित की अपेक्षा जब अपने को सुपठित, समृद्ध और उच्च पदस्थ कहने और मानने वालों (इसमें राजनेता और उनकी सन्तानें तथा उनके इर्द – गिर्द रहने वाले भी विशेष रूप से चिन्ता का विषय होने चाहिएं, क्योंकि ये कानून के बन्धन से प्राय: बच निकलते हैं।) की बढ़ती संख्या यदि कम न की जा सकी, तो भयावह परिणाम से बचना भी सम्भव नहीं होगा।

२. शिक्षण का दबाव – वैज्ञानिक विषयों का शिक्षण अपिरहार्य है। मानव जीवन को सुविधा सम्पन्न बनाने, भौतिक संसाधनों की उपलब्धता बढ़ाने के साथ आरोग्य प्रदान करने के लिए इन विषयों की उपेक्षा सम्भव नहीं है। विज्ञान वर्ग के विद्यार्थी को एकाग्रतापूर्वक निरन्तर परिश्रम की अपेक्षा होती है, किन्तु इसका एक भयावह दुष्परिणाम है – मानसिक तनाव। क्योंकि इन विषयों में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के अवसर सीमित हैं। शासकीय सहायता प्राप्त संस्थान जिनमें शिक्षण शुल्क सामान्य (इसे मध्यम वर्ग परिवार वहन कर सकते हैं।) है। अशासकीय संस्थानों में शुल्क इतना होता है, जिसे मध्यवर्गीय परिवार वहन करने में असमर्थ रहते हैं। अत: प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी और वह कम फीस के संस्थान में प्रवेश का इतना दबाव रहता है कि विद्यार्थी मानसिक तनाव में आ जाता है।

यद्यपि अभिभावक अपनी सन्तान का हित ही सोचते हैं, किन्तु उनकी अपेक्षाओं का बोझ और कई हजार में एक चुने जाने की तैयारी में कई बार विद्यार्थी अवसादग्रस्त भी होता है। इसी में कोचिंग संस्थानों का प्रचार और कई बार ऐसे विद्यार्थी को भी कोचिंग कराना

जिसमें सामर्थ्य भी नहीं है। आदि - आदि अनेक कारण तनाव को बढ़ा देते हैं। लाखों रुपये खर्च करने के बाद भी भविष्य की कोई आशा नहीं, तब विद्यार्थी अपनी मन:स्थिति किस के समक्ष व्यक्त करें? साथियों से कह नहीं सकता। माता - पिता दूर बैठे हैं और उनकी निराधार अपेक्षाओं का बोझ भी है। परिणामत: वह विद्यार्थी पंखे से लटक कर, ऊँची छत से कूद कर उस अमूल्य जीवन जिसमें डॉक्टर, इंजीनियर बनने के अतिरिक्त बहुत सम्भावनाएँ थीं, की परवाह न कर स्वयं को तो समाप्त करता ही है, अभिभावकों के लिए भी कभी समाप्त न होने वाली पीड़ा छोड़ जाता है।

कोटा (राजस्थान) के कोचिंग कर रहे विद्यार्थी की वह घटना किसे विचलित / व्यथित नहीं करेगी, जिसमें एकल पिता की सन्तान जिसमें पिता ४-५ दिन तक साथ है। पुत्र पिता से अपनी मनोव्यथा व्यक्त नहीं कर पाया और वह अभागा पिता स्वयं समझने में असमर्थ रहा। पिता वहाँ से गया और पीछे से पुत्र ने पंखे से लटक कर आत्महत्या कर ली। पिता घर भी नहीं पहुँचा था। मार्ग में सूचना मिली की पुत्र नहीं रहा। दु:खद परिणाम ५-७ दिन के अन्तराल में पिता ने भी जीवन को अलविदा कह दिया। पिछले कुछ वर्षों में इसी मानसिक दबाव में लगभग १५ विद्यार्थी प्रतिवर्ष आत्महत्या कर रहे थे। इस वर्ष अगस्त तक २३ विद्यार्थी जीवन समाप्त कर चुके हैं।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह सम्पूर्ण व्यवस्था विचार की ही नहीं, अपितु गम्भीर चिन्तन और परिवर्तन की अपेक्षा रखती है। साथ ही जो भी व्यवस्था प्रवृत्त हो, उसमें विद्यार्थी की मन:स्थिति का आकलन और उसके सामर्थ्यानुसार उसके लिए श्रेष्ठतर मार्गदर्शन अवश्य सम्मिलित होना चाहिए। जैसा कि सुझाव दिया जा रहा है कि पंखे की पंखुड़ियों को स्प्रिंगयुक्त बना दिया जाये जिससे उन पर कोई लटक न सके। यह कोई समाधान नहीं है।

डॉ. वेदपाल

वो आर्यसमाज है मेरा

जहाँ धर्म ध्यान का वैदिक चिन्तन, जिसने दिया घनेरा
वो आर्यसमज है मेरा
यहाँ यज्ञ योगमय जीवन से महके नित नया सवेरा
वो आर्यसमाज है मेरा...२
जो सत्य सनातन संस्कृतियों का परिचय हमें कराता
जात-पात से दूर सदा, जो मानवता बिखराता
ऋषि-मुनियों के, अमर ज्ञान का जिसमें लगता डेरा।
वो आर्यसमाज है मेरा...२
जहाँ ऋषिवर दयानन्द का दर्शन, पग-पग पर इठलाये
व्यक्ति-व्यक्ति में आत्मज्ञान का, ज्योति कलश चमकाये
आजादी के प्रथम घोष का, जिसने किया उजेरा।
वो आर्यसमाज है मेरा...२
पाखण्डों को खण्ड-खण्ड करना, जिसने बतलाया
बिलख-बिलख रोती धरती को अपने गले लगाया
राम, कृष्ण के सपनों का, होता जिसमें बसेरा।
वो आर्यसमाज है मेरा...२
गंगा की पावन धारा का, जिसने मान सिखाया
पूजा और अर्चना का सबको सद ज्ञान सिखाया
मातृभूमि की आँखों में है, उज्जवल जिसका चेहरा।
वो आर्यसमाज है मेरा...२
जहाँ श्रद्धा जैसे बलिदानी, माँ का मान बढ़ाये।
जहाँ पण्डित लेखराम से ज्ञानी जीना हमें सिखाये
जहाँ सत्य चित्त आनन्द के जैसा विरजानन्द चितेरा।
वो आर्यसमाज है मेरा...२
नारी का उद्धार जहाँ, सबसे पहले गहराया
वेद ज्ञान को पाने का, जिसने अधिकार दिलाया
मातृशक्ति की आन को जिसने, चारों ओर बिखेरा
वो आर्यसमाज है मेरा...२
प्रेम का है उद्घोष जहाँ पर 'प्रेमी' झूमे नाचे
आर्य भाव के शब्दों को, नित मन से अपने बाँचे
सत्यार्थप्रकाश का माथे अपने, बाँधा जिसने सेहरा।।
वो आर्यसमाज है मेरा...२

वैदिक सोच विचार

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

हम और हमारा परमात्मा : महर्षि दयानन्द जी ने आर्यसमाज के दूसरे नियम में ईश्वर का स्वरुप बताते हुए उसके बीस नाम दिये है। परमात्मा की सत्ता में विश्वास करने वाले आस्तिक मतों में अपने - अपने मत का परिचय देते हुए किसी ने भी परमात्मा के बीस नाम अपने मुख्य सिद्धान्तों में नहीं दिये हैं।

महर्षि ने विधर्मियों, विरोधियों से शाहजहाँपुर, बरेली, अजमेर व जालन्धर आदि नगरों में इस दृष्टि से एक और धमाका कर दिया। ईश्वर के गुण, कर्म तथा स्वभाव अनादि हैं। वह प्रभु अपने स्वभाव के विरुद्ध कुछ नहीं करता, न कर सकता है। मत पन्थों की रट यही रही है कि परमात्मा सबकुछ कर सकता है। यह सुनकर इस्लाम व ईसाई मत के पैरों तले से धरती ही खिसक गई। अपने जन्मकाल के पश्चात् सदियों बाद इन लोगों को ऋषि जी ने यह कहकर झकझोरा कि ईश्वर जो चाहे सो नहीं कर सकता।

कराची में आर्यसमाज का मुसलमानों से एक शास्त्रार्थ हुआ। मुसलमान मौलवियों का यह कहना था कि अल्लाह सब कुछ कर सकता है। आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी प्रेम जी ने उत्तर देते हुए यह कहा, ''उसे फिर कहो कि मुझे अपनी इस सृष्टि से निकालकर वहाँ फेंक दे जहाँ उसका शासन नहीं है अथवा जहाँ वह अल्लाह मियाँ नहीं है।'' इतने सरल स्पष्ट शब्दों में चुनौती सुनकर सब मौलवी चौंक गये। आर्यसमाजी विद्वान् की इस युक्ति से आर्यसमाज का डंका बज गया।

आर्यसमाजी विद्वान् भी आज यह नहीं जानते कि महर्षि के सत्संग से इस्लाम के सर्वमान्य विद्वान् व नेता सर सैयद अहमद ने भी ऐसा लिख कर इस्लाम को चौंका दिया था। सर सैय्यद अहमद की विशालकाय जीवनी में उसके ये शब्द स्पष्ट उद्धृत किये हैं कि अल्लाह मुझे अपनी सृष्टि से निकालकर वहाँ नहीं फेंक सकता जहाँ वह नहीं है। मैं कभी परोपकारी में पृष्ठ संख्या सहित हयाते जावेद का यह प्रमाण दे चुका हूँ। न जाने दिनरात ईश्वर व योग की चर्चा करने वाले आर्यसमाजी यह प्रमाण क्यों नहीं देते?

आर्यसमाज की एक अनूठी देन : पूज्यपाद पण्डित गंगाप्रसाद जी उपाध्याय ने ईश्वर विषयक वैदिक दृष्टिकोण पर एक अद्‌भुत बात लिखी है कि ईश्वर को वेद सर्वव्यापक, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान बतलाता है। वह प्रभु सर्वव्यापक है तभी तो सर्वज्ञ है और तभी सर्वशक्तिमान् और मानना पड़ेगा कि वह प्रभु तभी सृष्टिकर्त्ता है। मत पन्थों में कहीं स्पष्ट रुप से यह विचार नहीं मिलेगा और कौन इसे झुठला सकता है?

न जाने आज हमारे विद्वान् लेखक और वक्ता अपने पूजनीय दार्शनिक के इस कथन को, इन शब्दों को पूरी शक्ति से प्रचारित प्रसारित करके वैदिक धर्म की धूम क्यों नहीं मचाते? अब सारे संसार में अंग्रेजी के शब्दकोश का प्रचलन है। इसमें Omnipresent Omnipotent और Omniscient ये तीनों शब्द मिलते हैं। इनका प्रयोग करते समय मुसलमान और ईसाई सातों आसमानों को भूल जाते हैं। अल्लाह किस आसमान (Heven) में है? फरिशते कहाँ हैं? रसूल कौनसे आसमान पर है? इस्लाम की नई-नई पुस्तकों में अब सर्वत्र यह चर्चा नहीं मिलेगी।

पाकिस्तान में पूरे इस्लामी जोश से गाजी इल्मुद्‌दीन शहीद की एक पठनीय जीवनी छपी है। उसमें लिखा है कि फांसी पर चढ़ने से पहले न जाने जेल की अपनी कोठड़ी से वह आसमानों पर रसूल के पास स्वर्ग में कैसे पहुँच गया? और सकुशल फिर वह धरती पर लौट आया। न लौटकर आता तो जेल के पक्के नमाजी वार्डर को

उसके गुम होने के कारण जेल में ठूँसा जाता।

आर्यो! जानते हो यह गाजी कौन था? यह हमारे धर्मवीर महाशय राजपाल जी की हत्या करने आया तीसरा गाजी हत्यारा था। प्रश्न यह है कि आसमानों पर रसूल से मिलने क्या अब भी कोई आता-जाता है?

खुलकर कोई माने या न माने : खुलकर आज ईसाई, मुसलमान ईश्वर विषयक वैदिक दृष्टिकोण भले ही स्वीकार न करें, परन्तु दिल से तो सब यह स्वीकार करते हैं कि वह प्रभु हमारे भीतर है, बाहर है, हम उसमें हैं, वह हम में है। वह हर जन में है, हर तन में है और हर मन में है। अब इस्लामी साहित्य में अल्लाह के लिये 'मुहीत' (घेरने वाला) तथा प्रजा के लिये 'महात' घेरा गया शब्द अर्थात् व्याप्य व्यापक शब्द प्रयुक्त हुये मैंने पढ़ा है। अगली किसी सैद्धान्तिक पुस्तक में इन्हें सप्रमाण उद्धृत करूँगा।

यह आर्यसमाज की दिग्विजय है जिसका श्रेय पूज्य पं. लेखराम जी से लेकर पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय, पं. चमूपति जी, रामचन्द्र जी देहलवी, पं. धर्म भिक्षु, पं. शान्तिप्रकाश जी और ठाकुर अमरसिंहजी तक सब शास्त्रार्थ महारथियों को प्राप्त है। इसे गहराई से समझने के लिये स्वाध्याय प्रेमी मेरी मौलिक पुस्तक 'इस्लाम में वैदिक धर्म' की प्रतीक्षा करें। स्वामी धर्मानन्द जी उड़ीसा वालों ने कई वर्ष पूर्व मुझे एक इस्लामी पुस्तक पर ऐसी मार्मिक पठनीय पुस्तक प्रकाशित करने की प्रेरणा दी थी। मेरे जीवन की साँझ में अति शीघ्र यह उपहार प्राप्त होगा।

जीवनोपयोगी जीवनियाँ : श्री धमेन्द्र जी 'जिज्ञासु' आजकल हैदराबाद में हैं। वहाँ के मान्य प्रतिष्ठित आर्यबन्धु उनका लाभ लेने में लगे हैं और आप भी एक आदर्श मिशनरी के रुप में अपना सम्पर्क बढ़ाने व प्रचार कार्य में सक्रिय हैं। एक सच्चे मिशनरी के रुप में परिवारों व बच्चों में सम्पर्क बढ़ाने से आपको पता चला है कि बालोपयोगी युवकोपयोगी छोटी-छोटी जीवनियों की उधर लेखन व प्रकाशन की कोई योजना न होने से बालक-बालिकाओं व युवको कुमारों को श्री पं. नरेन्द्र जी की कोटि के अथक धर्मरक्षक तथा बलिदानी नेता की छोटी बड़ी चार पाँच प्रेरणाप्रद घटनाओं का भी ज्ञान नहीं। पण्डित जी के नाम व समाज सेवा के बारे में कुछ-कुछ सुन तो रखा ही है।

इससे धर्मेन्द्र जी को धक्का लगा। आपने झट से पूज्य पं. नरेन्द्र जी के जीवन की शिक्षाप्रद घटनाओं व देश तथा समाज सेवा पर एक ३२-३६ पृष्ठ की जीवनी लिखने के लिये लेखनी उठा ली है। उनका निश्चय प्रशंसनीय है। आप जैसा गुणी और विद्वान् इतिहासकार जो भी लिखेगा उससे बालकों व कुमारों का भला ही होगा और उन्हें प्रामाणिक जानकारी मिलेगा।

आर्यसमाज की सभाओं, सशक्त समाजों तथा प्रामाणिक लिखनेवालों का इधर ध्यान ही नहीं है। अन्य मत पन्थों की अपने इतिहास पर अपने बड़ों की लिखी बड़ी-बड़ी अ.ौर छोटी जीवनियाँ मैं देखता ही रहता हूँ। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने एक सौ सवा सौ पृष्ठ की श्री पं. लेखराम जी की एक जीवनी लिखी थी। इतने महान् विद्वान् कर्मवीर शहीद पर फिर एक शताब्दी तक आर्यसमाज ने क्या लिखा? किसने इस अभाव की चिन्ता की? बस भवन बनाने में ही शक्ति लगा दी। मैंने शहीद श्याम भाई की जन्म शताब्दी पर उनकी शानदार जीवनी लिखने का मन बनाया तो मुझे महाराष्ट्र में कहा गया कि जीवन चरित्र छोटा ही हो, बड़ा न हो। बड़े ग्रन्थ कौन पढ़ता है? स्वाध्याय की जिन्हें सनक रही, यह उन्हीं आर्यों की हीन सोच है। मैं उनकी बातों में आ गया। यह मेरी भूल थी।

मैंने पं. लेखराम जी के जीवन व बलिदान पर अत्यन्त खोजपूर्ण साढ़े पाँच सौ पृष्ठों से ऊपर का एक शानदार ग्रन्थ छपवा दिया। खपता या नहीं इसकी समाज में किसे चिन्ता है? मेरे मन में पं. लेखराम जी और पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय की लगाई आग धधकती ज्वाला

का रुप लेकर मुझे उनके अत्यन्त प्रामाणिक व प्रेरणाप्रद जीवन चरित्र लिखने के लिये खोज के मैदान में ले आई। मैंने लौह पुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी तथा शूरता की शान श्रद्धानन्द जी पर छह-छह सौ पृष्ठ के खोजपूर्ण जीवन चरित्र छपवा दिये। विश्व का कोई भी आर्यसमाज व सभा ऐसा साहस न कर सकी।

कुँवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर तथा ठाकुर अमरसिंह जी के एक विद्वान् भाई जो मौलवी फाजिल थे, एक दिन आर्यसमाज नया बांस दिल्ली में मुझसे कुछ गद्गद् होकर ऐसे भावपूर्ण शब्दों में बोले, ''आपने आर्यसमाज पर भारी उपकार किया है जो पं. लेखराम जी की 'हदीस शैली' में उनके जीवन की घटनाओं की खोज में लगे रहे और एक- एक घटना की जानकारी का स्रोत भी साथ-साथ दिया है। मैं ये ग्रन्थ खपा सका या नहीं परन्तु मौलवी शिवराज मौलवी फाजिल ने और उपाध्याय जी ने मुझे अवश्य टॉनिक दे दिया।''

आर्यसमाजियों की यह भ्रमित सोच : मैं जब एम.ए. अन्तिम वर्ष में इतिहास का विद्यार्थी था तो 'पंजाब का इतिहास' भी मेरा एक पेपर था। पजाब के सबसे बड़े और सुयोग्य इतिहासकार डॉ. हरिराम जी हमें यह पेपर पढ़ाते थे। आपने एक बार हमें लाला लाजपतराय पर अपना-अपना लेख लाने को कहा। कक्षा में वह पढ़कर सुनाना था। मेरा लेख सर्वश्रेष्ठ घोषित किया गया। मान्य डॉ. हरिराम जी ने वह मुझ से लेकर अपने रिकॉर्ड में सुरक्षित कर लिया। यह तो गौरव की बात थी परन्तु उसमें एक चूक थी।

मैंने आर्यसमाज में सुन-सुनकर उसमें यह लिख दिया कि लाला जी वीर अजीतसिंह के किसान आन्दोलन में उसके सक्रिय सहयोगी थे। लोकसेवक मण्डल द्वारा प्रकाशित और एक आर्य विद्वान् नेता द्वारा लिखित लाला जी के प्रामाणिक जीवन चरित्र को पढ़कर मेरा भ्रम भञ्जन हुआ। श्री महाशय कृष्ण जी के लेखों में यह मिथ्या कथन नहीं होता था। दीवान बद्रीदास जी का लाला जी पर एक भाषण में भी यह गप्प नहीं थी।

मैंने लाला जी के अपने लिखे लेखों के आधार पर और उनके संगी-साथी आर्य क्रान्तिकारी महाकवि लालचन्द फलक, लाला हरदयाल के प्रामाणिक साहित्य के प्रामण देकर परोपकारी में अपने कई लेखों व ग्रन्थों में यह लिखा है कि लाला जी उस कृषक आन्दोलन से दूर-दूर रहे तथापि, फिर भी आर्यसमाजी लेखों व अपनी पुस्तकों में बहुत डींग मारते हुये यह लिखते रहते हैं कि श्री लालाजी उस किसान आन्दोलन के नेता थे। क्या आर्यसमाजी लेखक प्रामाणिक व तथ्यपूर्ण लेखन की अपनी विलक्षणता की रक्षा नहीं करेंगे?

इस अनर्थ से समाज की रक्षा करिये : जब आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने सत्यार्थप्रकाश का पहले पहल उर्दू अनुवाद छपवाया तो आर्यनेताओं ने उर्दू के जाने-माने आर्य लेखकों को एक-एक, दो-दो समुल्लासों का अनुवाद करने का कार्य सौंपा। फिर उस अनुवाद की हमारे चोटी के विद्वानों से भी पड़ताल करवाई गई। अब बिना परखे भ्रामक साहित्य छपता रहता है।

स्वर्णिम इतिहास : आगे चलकर धर्मवीर महाशय राजपाल जी ने जब यह उर्दू अनुवाद पुनः प्रकाशित करवाया तो एक बार फिर से उसी अनुवाद की पड़ताल का कार्य श्री पं. भगवद्दत्त जी, पं. चमूपति जी आदि पूजनीय विद्वानों को सौंपा गया। अपनी इस सजगता के कारण आर्यसमाज धर्म प्रचार के हर मोर्चे पर विजयी रहा।

और अब की सुन लीजिये : लाला लाजपतराय लिखित उर्दू ग्रन्थ ऋषि जीवन सन् १८९८ में प्रकाशित हुआ। यह मूल ग्रन्थ इस समय मेरे हाथ में है। यह लाला जी की भूमिका तथा चार पृष्ठों के शुद्धि अशुद्धि पत्र सहित सात सौ (७००) पृष्ठों का है। उर्दू लिपि से देवनागरी लिपि बहुत कम स्थान घेरती है तथापि आश्चर्य का विषय तो यह है कि कुछ वर्ष पूर्व गोविन्दराम हासानन्द ने लाला जी के साहित्य का उर्दू अनुवाद जो छपवाया

उसमें यह ग्रन्थ नये सम्पादक के प्राक्कथन सहित केवल २७० पृष्ठों में छपकर प्राप्य रहा। उर्दू लिपि में सात सौ पृष्ठ थे तो देवनागरी में एक सहस्र (१०००) होने चाहिये थे। गड़बड़ कहाँ हुई? कैसे हुई? क्यों हुई? किसने की? इसकी चिन्ता न किसी नेता ने, न आर्य जनता ने और न प्रकाशक ने की। उस समय 'शरर' जी जैसे सिद्धहस्त उर्दू साहित्यकार समाज के पास थे। श्री अमर स्वामी जी और पं. शान्तिप्रकाश जी की कोटि के कई नररत्न तब समाज के पास थे। इससे अधिक मैं क्या लिखूँ? शङ्का तो मुझे पहले ही थी कि डाका पड़ेगा, परन्तु यह डाका ऐसा भयङ्कर होगा, यह नहीं सोचा था। मैंने तो हिन्दी में यह ग्रन्थ अभी देखा है पहले कभी थोड़ी सरसरी दृष्टि डाली थी।

आर्यो! जो मार्ग अब आपने पकड़ा है यह अत्यन्त घातक सिद्ध हो रहा है। इतना ही अच्छा है कि लाला जी को बी.ए. एल.एल.बी. नहीं बताया गया।

जब समय न हो और जब ज्ञान न हो : अभी इन्हीं दिनों कुछ प्रदेशों व नगरों से एक महत्त्वपूर्ण वैदिक सिद्धान्त पर शङ्का समाधान करने के लिये कुछ स्वाध्यायशील आर्यों ने मुझसे चलभाष पर सम्पर्क किया। मैं इन दिनों अत्यन्त व्यस्त चल रहा हूँ। मैंने विनम्रता से उन बन्धुओं से कहा, इस विषय पर दो-चार मिनट में आपका समाधान नहीं होगा। ठीक यह रहेगा कि आप डॉ. वेदपाल जी, डॉ. ज्वलन्त जी अथवा स्वामी विवेकानन्द जी महाराज मेरठ से शङ्का समाधान करने की विनती करें। आर्यसमाज का हित इसी में है। किसी अनाड़ी से इस विषय में कोई बात नहीं करनी चाहिए।

जिस विषय का जिसे ज्ञान न हो, उसे उस पर लिखना व बोलना नहीं चाहिये। जब से मैंने 'कुछ तड़प कुछ झड़प' का लिखना छोड़ा है कोई कृपालु विधर्मी पत्र-पत्रिकाओं के वार प्रहार का उत्तर नहीं देता। क्या उन्होंने प्रहार करना छोड़ दिया? क्या हिन्दुत्व वालों द्वारा अन्धविश्वासों के बारे में चुप्पी साधना देश धर्म की सेवा मानी जावे?

मन्दिर देश को क्या जोड़ेंगे? : कुछ दिन हुये श्री भागवत ने दूरदर्शन पर यह कहा, कि मन्दिरों से देशवासी जोड़े जायेंगे अथवा मन्दिर देश जाति को जोड़ेंगे। ऐसी सोच सुनने में तो बहुत अच्छी हो सकती है परन्तु यह वास्तविकता नहीं है। न तो मन्दिरों द्वारा कभी एकता हुई, न हो रही है और न हो सकेगी। दक्षिण के एक दलित भक्त मन्दिर के भगवान् के दर्शन करने पहुँचा। उसे वहाँ दर्शन हो सका। वह बिचारा भाग कर पिछले द्वार पहुँचा। वहाँ भगवान् दर्शन देने पहुँचे। उस दलित की मूर्ति आज भी बाहर पिछले द्वार पर देखी जा सकती है। भेदभाव ऊंचनीच कहाँ नहीं थी?

इतिहासकार ईश्वरीप्रसाद ने लिखा है कि हिन्दुओं ने मन्दिरों में मूर्तियों पर हीरे मोती सोना तो बहुत चढ़ा दिया, परन्तु लुटेरे आक्रमणकारियों से उस धन की रक्षा का प्रबन्ध न किया गया। विनोबा जी १९५३ में काशी में दलितों को मन्दिर में प्रवेश के लिये लेकर गये। सब पिट गये। मन्दिर भ्रष्ट हो गया। करपात्री बाबा ने थोड़ी दूर पर दलितों को दूर रखकर पूजा का नया मन्दिर एक गली में बनवा दिया।

कोई मन्दिर आक्रमण से, लूट से बचने का उपाय न कर सका। राममन्दिर तक भ्रष्ट कर दिया गया। देश रक्षा के लिये कुछ न किया जा सका। अब मेल मिलाप जड़ मूर्तियाँ क्या करेंगी? वैचारिक क्रान्ति देश सेवक विचारक ही कर सकते हैं पाषाण मूर्तियाँ क्या करेंगीं? करोड़ों जन मन्दिर प्रवेश से सहस्रों वर्ष तक वंचित रहे। यह काम इनके बस का नहीं है। ये जाति-पाति क्या मिटायेंगे?

धर्म्म- जिसका स्वरूप ईश्वर की आज्ञा का यथावत् पालन और पक्षपात-रहित न्याय, सर्वहित करना है, जो कि प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सुपरीक्षित और वेदोक्त होने से सब मनुष्यों के लिये यही एक धर्म्म मानना योग्य है, उसको '**धर्म**' कहते हैं। - **आर्योद्देश्यरत्नमाला - २**

श्री स्वामी सच्चिदानन्द जी का 'व्याख्यान'-एक अदने आर्यसमाजी की दृष्टि में-५

- भावेश मेरजा

पिछले अंक सितम्बर प्रथम से आगे....

अब पण्ड्या जी ने दूसरा प्रश्न पूछा- जब आप देशवासियों को वास्तविक एकता के सूत्र में बँधा देखना चाहते हैं, तो पुनः भिन्न-भिन्न मत-मतान्तरों के खण्डन में क्यों प्रवृत्त हैं? महर्षि जी ने इसका उत्तर देते हुए स्पष्ट किया कि- मिथ्या पाखण्डों और अंधविश्वासों के पुञ्जरूप मत-मतान्तरों के खण्डन से घबराने या भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि मत-सम्प्रदायों द्वारा फैलाये गये पारस्परिक विरोध और अनेकता ने राष्ट्रीय एकता को क्षति पहुँचाई है। उन्होंने पुनः स्पष्ट किया कि- हिंदू धर्माचार्यों की संकीर्ण मनोवृत्ति तथा उनके साम्प्रदायिक चिंतन ने समाज को छिन्न-भिन्न किया है। उन्हीं के अनुदार व्यवहार तथा आचरण ने तथाकथित निम्न वर्ग के लोगों को परम्परागत धर्म से विमुख कर ईसाई तथा मुसलमान बनने के लिए विवश किया है। सम्पूर्ण समाज के ढाँचे में जो जीर्णता तथा मुमूर्षु प्रवृत्ति घर कर गई है, उसका निवारण करने के लिये प्रचण्ड शक्तिपूर्ण, ओजस्वी, तेजस्वी तथा क्रान्तिकारी कार्यक्रम की आवश्यकता है; जो समाज में व्याप्त स्थितिस्थापकत्व, गतानुगति तथा कूपमण्डूकता की मनोवृत्तियों को नष्टकर उसे पुनः गतिशील, स्फूर्तियुक्त तथा प्राणवान् बनाये। अपने कथन का उपसंहार करते हुए महर्षि जी ने कहा - इसी महत् लक्ष्य की पूर्ति के लिये मैं व्यक्तिगत मानापमान की चिंता किये बिना, समाज के प्रत्येक वर्ग को प्रेरणा तथा उद्‌बोधन देता हुआ, देश में सर्वत्र भ्रमण कर रहा हूँ। मुझे अपने पथ से विचलित करने के अनेक प्रयत्न किये गये, यहाँ तक कि नाना प्रकार की शारीरिक यातनाएँ एवं विष देकर मुझे समाप्त करने तक की चेष्टाएँ की गईं, तथापि मैं अपने लक्ष्य की ओर निरन्तर बढ़ रहा हूँ, यह ईश्वर की महती कृपा है। महर्षि जी के इन उदात्त एवं स्फूर्तियुक्त वचनों को सुनकर पण्ड्या जी गद्‌गद् कण्ठ से यही कह सके कि काश, आप जैसे दो-चार अन्य धर्माचार्य देशोत्थान के इस कार्यक्रम में आपका सहयोग करते, तो लक्ष्य सिद्धि में अधिक विलम्ब नहीं होता। (द्रष्टव्य : नवजागरण के पुरोधा महर्षि दयानन्द सरस्वती, लेखक डॉ. भवानीलाल भारतीय, भाग-२, पृ. ८१९-८२०)

एक दिन पण्डित हरिश्चन्द्र ने महर्षि दयानन्द जी से निवेदन किया कि आपके खण्डन से वैर-विरोध बढ़ता है । तो महर्षि जी ने उन्हें समझाया कि- मेरा उद्‌देश्य सबको आपस में ऐसे मिलाना है जैसे जुड़े हुए हाथ । मैं कोल से ब्राह्मण तक में जातीयता की ज्योति जगाना चाहता हूँ। मेरा खण्डनहित और सुधार के लिए है। (द्रष्टव्य : महषि दयानन्द सरस्वती का जीवनचरित, लेखक देवेंद्रनाथ मुखोपाध्याय, पृष्ठ ५२५)

सच्चिदानन्द जी ने लिखा है- ''इतनी लम्बी-चौड़ी बातें लिखने का और कहने का एक ही हेतु है कि अब धर्मप्रचार खण्डन के द्वारा नहीं किन्तु मण्डन के द्वारा ही हो सकता है।''

परन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि धर्मप्रचार के कार्य का एक अति महत्त्वपूर्ण अंग होता है- सत्य का मण्डन और असत्य का खण्डन। जब तक सत्य का मण्डन और असत्य का खण्डन नहीं किया जाता तब तक धर्म प्रचार कैसे हो सकता है? महर्षि मनु जी ने धर्म के १० लक्षण बताए हैं। इन लक्षणों में बुद्धि, विद्या और सत्य की गणना की गई है। इसलिए जब तक सत्य को यथार्थ रूप से व्याख्यायित नहीं किया जाता और प्रचलित अंधविश्वासों, मूढ़ताओं और अवैज्ञानिक बातों का खण्डन कर जनता को जाग्रत नहीं किया जाता तब तक सही अर्थ में धर्म प्रचार हो ही कैसे सकता है? इसीलिए तो

ऋषियों ने कहा है-'असतो मा सद् गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय।' धर्म प्रचार के लिए भी लोगों को सत्य को ग्रहण करने की और अविद्या-अंधकार से मुक्त होने की प्रेरणा देना अति आवश्यक होता है । जब तक मिथ्या विश्वासों से, संशय या भ्रमणा से लोग मुक्त नहीं होंगे तब तक उनकी चेतना में सत्य का बीज ठीक से अंकुरित कैसे हो सकता है? इसलिए धर्म प्रचार का एक अनिवार्य और आवश्यक अंग है - असत्य का खण्डन।

दूसरी बात यह भी है कि आर्यसमाज भी अपने धर्म प्रचार के कार्य में अनेक मण्डनात्मक विषयों का प्रतिपादन करता ही है - जैसे कि आस्तिकवाद एवं एकेश्वरवाद का प्रचार, ईश्वर के वेदोक्त स्वरूप का प्रतिपादन, ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासनायुक्त योगाभ्यास, कर्मफल व्यवस्था, आवागमन तथा मोक्ष-प्राप्ति का विज्ञान, यज्ञ - अग्निहोत्र एवं षोडश संस्कार, गौरक्षा, गुरुकुल शिक्षण, आर्यवीर एवं वीरांगना दल, संस्कृत तथा हिंदी का प्रचार, वेद-व्याख्यान, वेद एवं आर्षग्रंथो ंका प्रकाशन, इत्यादि अनेक सकारात्मक कार्य आर्यसमाज के द्वारा किए जाते हैं। आवश्यकता पड़ने पर ही तर्क एवं प्रमाणों के आधार पर कुछ बातों का खण्डन अवश्य किया जाता है, मगर इसका उद्देश्य धर्म-जागरण, धर्म-संशोधन, परोपकार, सद्धर्म-रक्षा, ऐक्य-निर्माण, अन्ध श्रद्धा-निर्मूलन आदि होता है, किसी का दिल दुखाने का प्रयोजन नहीं होता है।

आर्यसमाज को खण्डन रूपी कार्य अपना कर्त्तव्य समझकर करना पड़ता है। मण्डन के साथ-साथ खण्डन की भी आवश्यकता रहती है । ईश्वर एक है के साथ-साथ ईश्वर अनेक नहीं है, यह भी बताना आवश्यक होता है। इसलिए हम देखते हैं कि जो भी व्यक्ति संसार में सत्य का प्रतिपादन करना चाहता है उसे प्रत्यक्ष या परोक्षरूप में - सीधा या घुमा फिराकर - कुछ बातों का खण्डन तो करना ही पड़ता है, इसके बिना उसका काम ही नहीं चल सकता है। हाँ, यह बात ठीक है कि खण्डन प्रीतिपूर्वक, सुधार की दृष्टि से ही किया जाना चाहिए। किसी का उपहास करने के लिए, किसी को नीचा दिखाने के लिए, किसी को अपमानित करने के लिए या ऐसे किसी भी द्वेषपूर्ण भाव से प्रेरित होकर खण्डन नहीं करना चाहिए।

सच्चिदानन्द जी जिन अर्वाचीन मत, पन्थ,संस्थाओं के बड़े प्रचार की बात कर रहे हैं, वस्तुत: वहाँ किस का प्रचार अधिक हो रहा है यह भी तो देखना चाहिए। वहाँ धर्मप्रचार के नाम पर कितना झूठ परोसा जा रहा है, इसकी ओर भी तो ध्यान देना चाहिए। लोगों की भीड़, अनुयायियों की विशाल संख्या, कार्यक्रमों का भौतिक ठाट-बाट, आडम्बर आदि से प्रभावित होने के स्थान पर हमें इस बात का परीक्षण करना चाहिए कि इनके द्वारा धर्म प्रचार के नाम पर जो बातें जनमानस में फैलाई जा रही हैं, उन बातों में से कितनी बातें सत्य एवं कल्याणकारी हैं और कितनी बातें मिथ्या एवं हानिकारक हैं। ठीक इसी प्रकार से हमें इस बात का भी आकलन करना चाहिए कि इन विभिन्न मत-पन्थ-सम्प्रदायों के प्रचलन के कारण हमारी सामाजिक एवं राजकीय एकता सुदृढ़ हुई है या विभाजित और क्षीण हुई है। इन्हीं बातों को लक्ष्य में रखकर महर्षि दयानन्द जी ने अवैदिक मत-मतान्तरों का खण्डन किया था और वे आर्यों से भी यही अपेक्षा रखते थे कि वे खण्डनीय बातों का खण्डन अवश्य करते रहेंगे। जैसे कि -

जो व्यक्ति विदेश जाता है उसके लिए भी महर्षि जी ने सत्यार्थप्रकाश के ११वें समुल्लास में लिखा है- "हाँ, इतना अवश्य चाहिये कि वेदोक्त धर्म का निश्चय और पाखण्ड-मत का खण्डन करना अवश्य सीख लें।" जब महर्षि जी एक विदेश यात्रा करने वाले भारतीय व्यक्ति से ऐसी अपेक्षा रखते हैं, तो वे पाखण्ड-खण्डन के क्षेत्र में आर्यसमाज के सदस्यों से कैसी अपेक्षा रखते होंगे इसका अनुमान सहजता से किया जा सकता है।

महर्षि जी ने सत्यार्थप्रकाश के अंत में अपने मन्तव्यों

की एक विशिष्ट सूची प्रस्तुत की है, जिसमें उन्होंने 'मनुष्य' की परिभाषा देते हुए स्पष्ट लिखा है कि-

''मनुष्य उसी को कहना कि जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं, किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं की- चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुण-रहित क्यों न हों उनकी- रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण; और अधर्मी चाहे चक्रवर्त्ती सनाथ, महा-बलवान् और गुणवान् भी हो, तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहाँ तक हो सके वहाँ तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें, परन्तु इस मनुष्यपनरूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।''(स्वमंतव्यामंतव्यप्रकाशः) इससे स्पष्ट होता है कि वे प्रत्येक मनुष्य से इस बात की अपेक्षा रखते थे कि वह अधर्म, अन्याय को दूर हटाने के लिए यथा सामर्थ्य संघर्ष करें, तभी वह सच्चे अर्थ में 'मनुष्य' कहलाएगा।

महर्षि जी ने १८७५ में पुणे में दिए गए अपने एक भाषण में कहा था कि जब हमारी महिलाएं वेद पढ़ेंगी तब इन पाखण्डी पण्डितों की गलत बातों का प्रतिवाद ठीक से कर पाएगी। उनके शब्द थे-

''प्राचीन आर्य लोगों में गार्गी, मैत्रेयी आदि कैसी-कैसी विदुषी स्त्रियाँ हो गई हैं। यदि स्त्रियाँ पढ़ी-लिखी होतीं, तो आजकल 'स्त्री को विद्या पढ़ने का अधिकार नहीं है, वह शूद्र के समान है' -ऐसे अर्वाचीन पण्डितों की बड़बड़ाहट का खण्डन करके एक घड़ी में इनका मँह बन्द कर देतीं।'' (उपदेश-मंजरी, १२वाँ प्रवचन)

महर्षि दयानन्द जी की उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखते हुए हमें लगता है कि आर्यसमाज के लोगों को खण्डन से विरत रहने का सुझाव चाहे कितनी ही हित-भावना से दिया गया हो, परन्तु वह व्यवहारिक सुझाव नहीं है। आर्यसमाज के लोग महर्षि दयानन्द जी द्वारा निर्देशित कर्त्तव्य-पथ पर चलते रहें, इसी में आर्यसमाज तथा समस्त मानवसमाज का हित निहित है।

आर्यसमाज को सलाह देते हुए सच्चिदानन्द जी लिखते हैं- ''अगर हमारा लक्ष्य पूरे जनसमूह की एकता का है तो पूरे जनसमूह की सभी उपासना पद्धतिओं का स्वीकार करना होगा। यदि स्वीकार न कर सकें तो कम से कम खण्डन तो नहीं ही करना चाहिए।'' सच्चिदानन्द जी की यह बात भी हमें व्यावहारिक नहीं लगती है, क्योंकि उपासना भी एक विद्या या विज्ञान है। वेद, उपनिषद्, सांख्य-योग-वेदान्त आदि दर्शन शास्त्रों में वैदिक ईश्वरवाद तथा उपासना पद्धति का सम्यक् वर्णन किया गया है। आर्यसमाज इसी उपासना पद्धति का अनुपालन करता है, जो इन ग्रन्थों में वर्णित है। क्या अन्य मत-सम्प्रदायों में भी यही उपासना पद्धति का प्रचलन है? नहीं है। प्रायः सभी पौराणिक या हिन्दू सम्प्रदाय साकारवादी मूर्तिपूजक हैं, जो अपने-अपने प्रिय व्यक्तियों की, सम्प्रदाय प्रवर्तकों के चित्रों या मूर्तियों की पूजा-अर्चना करते हैं। स्वामी विवेकानन्द तथा श्री अरविन्द घोष दोनों सुपठित और प्रबुद्ध थे, परन्तु उनकी संस्थाओं या आश्रमों में जाकर देखिए वहां उनके अनुयायी श्रीराम कृष्ण परमहंस, उनकी पत्नी शारदामणि देवी, विवेकानन्द, श्री अरविन्द, माताजी (मीरा अल्फ़ासा) आदि के चित्रों, मूर्तियों एवं तथाकथित समाधियों की पूजा-अर्चना कर रहे हैं। ये तो केवल दो ही उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किए हैं। केवल दो सौ वर्ष पूर्व जिस व्यक्ति का देहान्त हुआ उन्हें भगवान् बनाकर उनके नाम से देश-विदेश में अनेकानेक विशाल मन्दिर खड़े कर लाखों आस्तिक लोगों को उनकी मूर्तियों की पूजा-आराधना में प्रवृत्त करने वाले सम्प्रदायों की वेद-विरुद्ध उपासना पद्धति को आर्यसमाज कदापि स्वीकार नहीं कर सकता। आर्यसमाज तो वेद और उपनिषद् की भाषा में यही घोषणा कहेगा कि -'तमेव विदित्वाति

मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।' (यजुर्वेद ३१.१८), 'तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते।' (केनोपनिषद् १.४-८)। इसीलिए तो महर्षि दयानन्द जी ने आर्यसमाज के दूसरे नियम में ईश्वर के सच्चिदानन्द-स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, अनादि, अजन्मा, अनन्त आदि २० विशेषणों का उल्लेख कर अंत में लिखा है कि- 'उसी की उपासना करनी योग्य है।' विशुद्ध एकेश्वरवादी, वेदवादी आर्यसमाज को एकता के नाम पर अवैदिक उपासना पद्धतियों को स्वीकार करने का परामर्श आर्यसमाज को कैसे मान्य हो सकता है? कदापि मान्य नहीं हो सकता।

अपने इस व्याख्यान में सच्चिदानन्द जी ने आर्यसमाज को विनम्र सुझाव दिया है कि- अब खण्डन करने का युग नहीं रहा है, वह समय चला गया, इसलिए किसी का खण्डन नहीं करना चाहिए। उनका विचार है कि खण्डन करने से जिसका खण्डन किया जाता है वह व्यक्ति या समुदाय आपका विरोधी हो जाता है, दुश्मनी पैदा होती है और इससे हमारी एकता को हानि पहुँचती है, इसलिए आर्यसमाज को अब खडन बन्द कर देना चाहिए और सभी को एक करने के लिए, एकता के लिए प्रयास करना चाहिए। आर्यसमाज एकता का मूल्य भली-भांति समझता है और सच्चिदानन्द जी की इस पवित्र भावना का समादर करता है, परन्तु उनका यह सुझाव हमें उचित नहीं लगता है, क्योंकि एकता के लिए भी खण्डन की आवश्यकता रहती है । महर्षि दयानन्द जी ने न केवल हिन्दू मत-सम्प्रदायों की एकता, बल्कि समस्त मानव-समाज की एकता को लक्ष्य में रखकर कार्य किया था और इसी उद्‌देश्य से उन्होंने सत्यार्थप्रकाश की रचना की थी और आर्यसमाज स्थापित किया था। सत्यार्थप्रकाश की मुख्य भूमिका तथा उत्तरार्ध की चार अनुभूमिकाओं में उन्होंने खण्डन-मण्डन के उद्‌देश्य को स्पष्ट किया है। विशेष रूप से सत्यार्थप्रकाश के अन्तिम प्रकरण स्वमंतव्यामंतव्यप्रकाश के अंतिम पैराग्राफ में महर्षि जी ने अपने इसी उद्‌देश्य को प्रकट करते हुए लिखा है-

''जो-जो बात सबके सामने माननीय है उसको मानता अर्थात् जैसे सत्य बोलना सबके सामने अच्छा और मिथ्या बोलना बुरा है, ऐसे सिद्धान्तों को स्वीकार करता हूँ और जो मत-मतान्तर के परस्पर विरुद्ध झगड़े हैं उनको मैं प्रसन्न नहीं करता, क्योंकि इन्हीं मतवालों ने अपने मतों का प्रचार कर मनुष्यों को फंसा के परस्पर शत्रु बना दिए हैं। इस बात को काट,सर्व सत्य का प्रचार कर, सबको ऐक्यमत में करा, द्वेष छुड़ा,परस्पर में दृढ़ प्रीतियुक्त कराके सबसे सबको सुख-लाभ पहुँचाने के लिए मेरा प्रयत्न और अभिप्राय है। सर्वशक्तिमान् परमात्मा की कृपा सहाय और आप्तजनों की सहानुभूति से यह सिद्धान्त सर्वत्र भूगोल में शीघ्र प्रवृत्त हो जावे, जिससे सब लोग सहज से धर्मार्थ काम, मोक्ष की सिद्धि करके सदा उन्नत और आनन्दित होते रहें। यही मेरा मुख्य प्रयोजन है।''

महर्षि जी द्वारा प्रवर्तित आर्यसमाज का उद्‌देश्य भी यही है कि मानव-समाज में एकता का सृजन किया जाए। वास्तव में आर्यसमाज के द्वारा विभिन्न वेद-विरुद्ध मत-पन्थ-मजहबों की मिथ्या बातों का जो खण्डन किया जाता है वह भी इसी उद्‌देश्य की पूर्ति के लिए किया जाता है।

सच्चिदानन्द जी ने स्वयं अपने इस मौखिक व्याख्यान में बताया है कि- वर्तमान भारत में लगभग बीस हजार मत-पन्थ-सम्प्रदाय हैं, जिनके कारण हमारा विभाजन हुआ है और हम कमजोर हो गए हैं। साम्प्रदायिकता, जातिवाद, आचार और विचार आदि की भिन्नता के कारण हमारा निरन्तर विभाजन ही होता रहा है।

अब विचारणीय प्रश्न ये हैं कि क्या इन विभिन्न मत-मतान्तरों के उद्‌भव के लिए आर्यसमाज उत्तरदायी है? क्या आर्यसमाज के द्वारा खण्डन कार्य बन्द कर देने से सभी मत-पन्थों में अनायास एकता पैदा हो जाएगी?

क्या एकता न होने का कारण आर्यसमाज है? आर्यसमाज तो १८७५ ई. में स्थापित हुआ। परन्तु इसकी स्थापना से कई शताब्दियों पूर्व भारतीय समाज अनेक मत-मतान्तरों तथा जन्म-आधारित जातिप्रथा आदि के कारण विखण्डित हो चुका था।

अभी देखते ही देखते गुजरात के एक प्रसिद्ध साकारवादी और मूर्तिपूजक सम्प्रदाय के अनेक मतान्तर या उप-सम्प्रदाय बन चुके हैं- कुल ५-६-७ कितने हैं यह भी निश्चित रूप से बताना कठिन है। सच्चिदानन्द जी मूलतः गुजराती हैं और कई दशकों से गुजरात में ही निवास कर रहे हैं। यदि वे अपने जीवन में केवल इस एक ही सम्प्रदाय के इन ५-६-७ उप-सम्प्रदायों के बीच में ही सामंजस्य बैठाकर उन सभी में एकता पैदाकर पाने में कामयाब होते तो आर्यसमाज को भी उनके इस कार्य से मार्गदर्शन प्राप्त होता और इसी मार्ग का अवलम्बन कर वह भी एकता के लिए प्रयास करता, परन्तु क्या ऐसा किया जा सका है? इतना ही नहीं, सच्चिदानन्द जी ने अपने इस व्याख्यान में सभी मत-मतान्तरों को एकजुट करने के लिए, एकता निर्माण करने के लिए क्या करना चाहिए, किस प्रकार से, किस विधि से एकता उत्पन्न की जा सकती है- यह भी कहीं स्पष्ट रूप से नहीं बताया है। बस, केवल आर्यसमाज को इसके लिए खण्डन का कार्य छोड़ देना चाहिए और एकता के लिए प्रयास करना चाहिए यही निवेदन किया है।

वस्तुतः आर्यसमाज के द्वारा जो खण्डन किया जाता है इसका उद्देश्य यही होता है कि हम सब लोग पक्षपात छोड़कर अपने-अपने साम्प्रदायिक विश्वासों एवं मान्यताओं से ऊपर उठकर केवल उन सत्यों को स्वीकार करें, जो तर्क एवं प्रमाण के द्वारा समर्थित एवं पोषित हैं; जो सार्वभौम, सार्वकालिक, सार्वजनीन और तर्क-प्रमाण से सुपरीक्षित होने से सबके द्वारा वरणीय और कल्याणकारी हैं। आर्यसमाज खण्डन इसलिए करता है कि जिससे सभी लोग अपने-अपने मत-पन्थों का दुराग्रह छोड़कर एक ही सत्यमत के अनुयायी होवें। जब तक सत्य की जिज्ञासा, अन्वेषण, निर्णय और स्वीकार नहीं किया जाता तब तक साम्प्रदायिक भिन्नताएं एकता के मार्ग में बाधा बनकर खड़ी रहेंगी। इसलिए आर्यसमाज के द्वारा किए जाने वाले खण्डन का यथार्थ तात्पर्य समझने की आवश्यकता है।

यदि हमारा उद्देश्य सभी को एक करने का है, तो हमें उन सत्यों का प्रतिपादन, प्रचार और स्वीकार करना होगा जो यथार्थ हैं; और एकता के मार्ग में बाधा रूप बनने वाली असत्य बातों को उजागर कर उन्हें असत्य सिद्ध कर उनसे विमुख होना पड़ेगा,क्योंकि केवल सत्य के आधार पर ही स्थायी ऐक्य सम्भव है। मिथ्या बातों से समझौता करने से या उनकी अनदेखी या उपेक्षा करने से एकता निर्माण नहीं होती है, इससे तो अनिष्ट बढ़ते हैं। एकता तभी निर्मित होती है जब सभी के मन्तव्य एक जैसे हों, उद्देश्य एक जैसा हो। इसीलिए ऋग्वेद के अंत में एकता-प्रेरक '**संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्, समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्, समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः**' इत्यादि मन्त्र पढ़े गए हैं। आर्यसमाज के द्वारा जो खण्डन किया जाता है इसके पीछे मानव एकता का प्रयोजन निहित है, परन्तु साम्प्रदायिक लोग अपने अज्ञान या स्वार्थ के कारण आर्यसमाज के इस पवित्र उद्देश्य को समझने और स्वीकार करने के लिए कहाँ तैयार हैं? खण्डन-मण्डन के पीछे महर्षि दयानन्द जी का वास्तविक प्रयोजन समझने के लिए सत्यार्थप्रकाश के ११वें समुल्लास में दिए गए निम्नलिखित प्रश्नोत्तर और संवाद अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं-

"**प्रश्नः** आप सबका खण्डन करते ही आते हो परन्तु अपने-अपने धर्म में सब अच्छे हैं। खण्डन किसी का न करना चाहिए। जो करते हो तो आप इनसे विशेष क्या बतलाते हो। जो बतलाते हो तो क्या आपसे अधिक वा तुल्य कोई पुरुष न था? और न है? ऐसा अभिमान

करना आपको उचित नहीं, क्योंकि परमात्मा की सृष्टि में एक-एक से अधिक, तुल्य और न्यून बहुत हैं। किसी को घमण्ड करना उचित नहीं।

उत्तर: धर्म एक होता है वा अनेक? जो कहो अनेक होते हैं तो एक-दूसरे के विरुद्ध होते हैं वा अविरुद्ध? जो कहो कि विरुद्ध होते हैं तो एक के बिना दूसरा धर्म नहीं हो सकता और जो कहो कि अविरुद्ध हैं तो पृथक्-पृथक् होना व्यर्थ है। इसलिए धर्म और अधर्म एक ही हैं। अनेक नहीं। यही हम विशेष कहते हैं कि जैसे सब सम्प्रदायों के उपदेशकों को कोई राजा इकट्ठा करे तो एक सहस्त्र से कम नहीं होंगे, परन्तु इनका मुख्य भाग देखो तो पुरानी, किरानी, जैनी और कुरानी चार ही हैं, क्योंकि इन चारों में सब सम्प्रदाय आ जाते हैं।...

मत वाले: एक मत कभी नहीं हो सकता, क्योंकि मनुष्यों के गुण, कर्म, स्वभाव भिन्न-भिन्न हैं।

जिज्ञासु: जो बाल्यावस्था में एक सी शिक्षा हो, सत्यभाषणादि धर्म का ग्रहण और मिथ्याभाषणादि अधर्म का त्याग करें तो एक मत अवश्य हो जायें और दो मत अर्थात् धर्मात्मा और अधर्मात्मा सदा रहते हैं वे तो रहें, परन्तु धर्मात्मा अधिक होने और अधर्मी न्यून होने से संसार में सुख बढ़ता है और जब अधर्मी अधिक होते हैं तब दु:ख। जब सब विद्वान् एक सा उपदेश करें तो एक मत होने में कुछ भी विलंब न हो।''

एकता तभी मानी जा सकती है जब एकता के कुछ सूत्र सभी में दिखलाई पड़े। इसलिए जब तक विभिन्न मत-सम्प्रदाय अपने-अपने साम्प्रदायिक आस्थाओं तथा मन्तव्यों पर पुनर्विचार नहीं करते, उन्हें तर्क-प्रमाण की कसौटी पर नहीं कसते, तब तक वे सत्य को नहीं जान पाएंगे। एकमात्र सत्य ही ऐसा तत्त्व है जो सभी को जोड़ सकता है। आर्यसमाज यही चाहता है कि सम्प्रदाय-मुक्त धार्मिकता का संवर्धन हो और सभी सम्प्रदाय सत्य की शरण में आकर अपने-अपने साम्प्रदायिक मताग्रहों से विमुक्त हों। बहुदेवतावाद, मूर्तिपूजा, व्यक्तिपूजा, गुरुडम, अवतारवाद, अनार्ष ग्रन्थों का प्रचलन- इन सभी के कारण अनेक सम्प्रदाय खड़े हो गए हैं और प्रतिवर्ष नए-नए मत-पन्थ उत्पन्न होते ही जा रहे हैं। इसलिए सच्चिदानन्द जी की भावना पवित्र होते हुए भी उनका यह सुझाव कि आर्यसमाज को अब खण्डन नहीं करना चाहिए हमें व्यवहारिक प्रतीत नहीं होता है।

सच्चिदानन्द जी ने अपने इस मौखिक व्याख्यान में कहा कि- सत्य एकाकी होता है, सत्य का टोला [भीड़ या झुण्ड] नहीं होता। कोई इक्का-दुक्का ही सत्य के मार्ग पर चलता है। हमें टोले बनाने हैं, क्योंकि 'संघे शक्ति कलियुगे'। इसलिए हमें 'एकता परमो धर्म:' सूत्र को मानकर चलना होगा।

सच्चिदानन्द जी की उपर्युक्त बात से तो ऐसा लगता है कि हमें एकता के नाम से ऐसे लोगों को जोड़ना है जो चाहे सत्य को न भी जानते-मानते हों फिर भी संगठन-भाव से अनुप्राणित हों। ऐसा होता है तो अच्छी बात है।आर्यसमाज तो मनुष्य मात्र को वैदिक ज्ञान-विज्ञान से आलोकित करना चाहता है। वेद पर मनुष्य मात्र का अधिकार है और वेद ही सत्य विद्याओं के ग्रन्थ हैं। यदि हम वेदों का प्रचार करने में प्रमाद करेंगे तो स्थिति ऐसी होगी जिसका उल्लेख स्वयं सच्चिदानन्द जी ने अपने इस मौखिक व्याख्यान में अपने जीवन के पचास वर्ष पूर्व के संस्मरण वर्णित करते हुए किया था कि- सिद्धपुर में ब्राह्मणों के लगभग ढ़ाई हजार घर थे, परन्तु जब मैंने वहाँ पूछा तो एक भी परिवार ऐसा नहीं मिला कि जिसके घर में एक भी वेद का ग्रन्थ उपलब्ध था।

वेदों को लेकर इसी दयनीय स्थिति में सुधार हो, लोग वेदों के बारे में अधिकाधिक जान सकें, वेदोक्त सत्य सनातन धर्म का अनुपालन करें, इसी उद्देश्य से महर्षि जी ने वेदों के प्रचार के लिए अलख जगाई थी और इसलिए आर्यसमाज भी वेदप्रचार के कार्य को आगे

बढ़ा रहा है।

सच्चिदानन्द जी की दृष्टि में - भागवतपुराण, रामचरित मानस आदि की कथाओं के आयोजन से करोड़ों रुपए इकट्ठे होते हैं और शिक्षा, अस्पताल एवं मानवता के क्षेत्र में सद्व्यय होते हैं। बहुत बड़ा निर्माण-कार्य होता है। वे अपने 'व्याख्यान' में कहते हैं- ''आजकल हम लोग थोड़े बहुत भी अपने धर्म और संस्कृति से जुड़े हुए हैं, तो इनमें इन कथाओं, सप्ताहों और धार्मिक आयोजनों का बहुत बड़ा योगदान है । अगर ये बिलकुल न होते तो हम कहीं के नहीं रहते। जहाँ ऐसे कोई धार्मिक आयोजन नहीं होते वहाँ के लोगों को देखिए तो पता चलेगा कि वे लोग धर्म-संस्कृति से विमुख हो गये हैं। जिसका लाभ विधर्मी उठाते हैं।''

आर्यसमाज धार्मिक कथा आदि आयोजनों का विरोधी नहीं है। समाज के कल्याण हेतु धन-संग्रह करने का भी विरोधी नहीं है, परन्तु इन कथा, सप्ताह आदि आयोजनों में श्रोताओं को जो ज्ञान परोसने में आता है, इसको लेकर जरूर चिन्ता और आपत्ति है। इन कथाओं आदि के आयोजनों में प्राय: वेद-विरुद्ध पौराणिक मिथ्या बातों का ही प्रचार-प्रसार किया जाता है, जिसके कारण लोग मूढ़ धारणाएं, अन्धविश्वास आदि से मुक्त नहीं हो पाते हैं और सम्प्रदायों में विभाजित बने रहते हैं। इन कथाओं, सप्ताहों आदि में यदि धर्म और अध्यात्म विषयक केवल यथार्थ-वेदानुकूल बातें ही प्रस्तुत की जाएं तो इनसे जनता का कल्याण होता है, जन-जागरण होता है, धर्म और समाज का उत्कर्ष होता है और सभी मत-सम्प्रदायों के बीच में ऐक्य-भाव का संचार भी होता है, परन्तु प्राय: ऐसा नहीं होता है। इन कथाओं एवं सप्ताहों में एकत्रित हुए धन का जन-कल्याण हेतु खर्च करने पर आर्यसमाज को क्या आपत्ति हो सकती है? यह कार्य तो प्रशंसनीय है।

जिन्हें 'विधर्मी' कहा जाता है वे भी कभी न कभी हमारे ही समाज के अंग थे, परन्तु मत-मतान्तरों की संकीर्णताओं के चलते हम रूढ़िवादी हो गए और फिर हमारे ही जन्म-आधारित जातिप्रथा, अस्पृश्यता, शोषण, अन्याय आदि दोष तथा विदेशियों के आक्रमण-अत्याचार के कारण हमारे ही देश के लाखों-करोड़ों लोग 'विधर्मी' बन गए।

इसलिए आर्यसमाज को इस बात की चिन्ता है कि यदि हम लोग देश, धर्म, संस्कृति को सुरक्षित करने के लिए संगठित और जागरूक नहीं हुए और यूं ही अपने-अपने मत-सम्प्रदायों में विभक्त बने रहेंगे तो विधर्मियों के षड्यन्त्रों के सामने स्वयं को सुरक्षित रख पाने में हम नाकामयाब रहेंगे। इसलिए सभी को वेदों के आदेश अनुसार चलना चाहिए और एक मत होकर अपने देश, धर्म और संस्कृति पर मंडराते संकट का एकजुट होकर सामना करना चाहिए। इस कार्य में हमें तभी सफलता मिल सकती है जब हिन्दुओं के ही सभी मत-सम्प्रदाय एकता के सूत्र में आबद्ध हों और अपनी-अपनी साम्प्रदायिक संकीर्णताओं से ऊपर उठकर एक ही वैदिक धर्म में निष्ठा रखकर समस्त हिन्दू समाज के कल्याण की चिंता करें।

सच्चिदानन्द जी ने आर्यसमाज को सुझाव देते हुए लिखा है कि- ''एक बात ख़ास याद रखिए : धर्म में जितने 'नकार' ज्यादा होंगे उतनी ही नफरत भी ज्यादा होगी। 'यह गलत है, यह गलत है, यह गलत है', ऐसा बार-बार कहने से और मानने से हमारा दृष्टिकोण नफरत से भर जाता हैं। इसकी जगह 'यह भी सही हो सकता है, यह भी सही हो सकता है, यह भी सही है', ऐसा मानने या बोलने से हमारा हृदय सद्भाव और प्रेम से भर जाता है। गंगा जैसी नदियाँ केवल पानी ही पानी है, यह सत्य है। लेकिन धार्मिक क्षेत्र में समूह की दृष्टि से वह सिर्फ पानी ही नहीं किन्तु माता है, पापनाशिनी है, मोक्षदायिनी है।''

आश्चर्य होता है कि सच्चिदानन्द जी आर्यसमाज को कैसी-कैसी सलाह दे रहे हैं! वेदादि सभी सत्यशास्त्रों

में हमें सर्वत्र विधि और निषेध दोनों प्रकार की बातें पढ़ने को मिलती हैं। अवैदिक मत-सम्प्रदायों के ग्रन्थों में भी ये दोनों प्रकार की बातें वर्णित होती हैं। सभी विद्या-शाखाओं में दोनों प्रकार की बातों का वर्णन पाया जाता है कि जिससे बात पूरी तरह से स्पष्ट हो जाए। फिरभी सच्चिदानन्द जी चाहते हैं कि आर्यसमाज को नकार की अर्थात् खण्डन की शैली छोड़कर केवल सकारात्मक, मण्डनात्मक बातें ही प्रस्तुत करनी चाहिए। सत्यार्थप्रकाश के पूर्वार्ध में प्रथम १० समुल्लासों में वैदिक धर्म का मण्डनात्मक वर्णन किया गया है, जबकि उत्तरार्ध के ४ समुल्लासों में खण्डन-मण्डन किया गया है। महर्षि जी के ग्रन्थों में मण्डनात्मक बातों का विस्तार अधिक है, आवश्यकता पड़ने पर ही उन्होंने खण्डन किया है। वे ऋषि कोटि के व्यक्ति थे, वे शास्त्रीय सत्यों के साथ-साथ लौकिक सत्यों के भी विशेषज्ञ थे। आर्यसमाज के उपदेशक भी अधिकतर मण्डनात्मक शैली में ही प्रचार करते हैं, केवल अत्यावश्यक होने पर ही खण्डन करते हैं।

आर्यसमाज को लोकप्रिय बनाने की सर्वाधिक चिन्ता तो स्वयं आर्यसमाज के लोग ही करते हैं। परन्तु जैसा सच्चिदानन्द जी चाहते हैं वैसे आर्यसमाज के लोग कभी नहीं हो सकते कि वे 'यह भी सही हो सकता है, यह भी सही हो सकता है, यह भी सही है' -ऐसी बातें करने लग जाएं। आर्यसमाज आर्यों का, विवेकी जनों का, तार्किक एवं प्रमाणवादियों का संघ है, कोई विदूषकों की मण्डली तो है नहीं, जो सबकी हाँ में हाँ मिलाती रहे। आर्यसमाज '**लक्षणप्रमाणाभ्यां वस्तुसिद्धिः न तु प्रतिज्ञामात्रेण**' के अनुसार न्याय-दर्शन की पद्धति से सत्य-असत्य की विवेचना करनेवालों का समाज है। सद्भाव और प्रेम करने-जताने का रास्ता यह नहीं हैं कि गलत बातों का समर्थन किया जाएया उन्हें नजर-अन्दाज की जाएं। किसी को सत्य का मार्ग देखाना, अंधविश्वासों, कुरीतियों, निरर्थक कर्मकांडों, वहमों, भ्रमणाओं के जाल से विमुक्त करना यही सच्चा मार्ग है सद्भाव और प्रेम करने-जताने का।

यदि आर्यसमाज सच्चिदानन्द जी की सलाह का अनुसरण करने लग जाए तो उसे इस प्रकार की बातें करने के लिए बाध्य होना पड़ेगा- ईश्वर की सत्ता है यह भी सही हो सकता है और ईश्वर केवल एक कल्पना है यह भी सही हो सकता है, ईश्वर एक है यह भी सही हो सकता है और ईश्वर अनेक है यह भी सही हो सकता है, ईश्वर निराकार है यह भी सही हो सकता है और ईश्वर साकार है यह भी सही हो सकता है, ईश्वर अवतार नहीं लेता है यह भी सही हो सकता है और ईश्वर अवतार लेता है यह भी सही हो सकता है, ईश्वर-जीव-प्रकृति ये तीन अनादि सताएं हैं यह भी सही हो सकता है और केवल अकेला ब्रह्म ही अनादि सत्ता है यह भी सही हो सकता है, ईश्वर और जीव भिन्न हैं यह भी सही हो सकता है और ईश्वर और जीव अभिन्न है यह भी सही हो सकता है, जगत् सत्य है यह भी सही हो सकता है और जगत् मिथ्या है यह भी सही हो सकता है, पुनर्जन्म होता है यह भी सही हो सकता है और पुनर्जन्म नहीं होता है यह भी सही हो सकता है, वेद अपौरुषेय या ईश्वरीय ज्ञान है यह भी सही हो सकता है और वेद पौरुषेय या मानवीय ज्ञान है यह भी सही हो सकता है, समाधि तथा मोक्ष वास्तविक हैं यह भी सही हो सकता है और समाधि तथा मोक्ष काल्पनिक हैं यह भी सही हो सकता है, गुण-कर्म-स्वभाव आधारित वर्ण व्यवस्था भी सही हो सकती है और जन्म आधारित वर्ण व्यवस्था भी सही हो सकती है, भूतप्रेतादि काल्पनिक हैं यह भी सही हो सकता है और भूतप्रेतादि वास्तव में होते हैं यह भी सही हो सकता है, मूर्तिपूजा वेद-विरुद्ध अन्धविश्वास है यह भी सही हो सकता है और मूर्तिपूजा वेदानुकूल और सत्य है यह भी सही हो सकता है, इत्यादि।

अब विचार कीजिए, ऐसी-ऐसी मान्यताओं वाले, बिना रीढ़ की हड्डी के आर्यसमाज की क्या स्थिति

होगी, क्या प्रतिष्ठा होगी, क्या पहचान होगी, क्या वैशिष्ट्य होगा। इससे तो अच्छा होगा कि अपने वेदोक्त कर्त्तव्य पथ पर पुरुषार्थ और संघर्ष करते हुए आर्यसमाज नाम शेष हो जाए! कैसे परामर्श दिए जा रहे हैं आर्यसमाज को!

सच्चिदानन्द जी ने गंगा का उदाहरण दिया है कि- ''गंगा जैसी नदियाँ केवल पानी ही पानी है, यह सत्य है। लेकिन धार्मिक क्षेत्र में समूह की दृष्टि से वह सिर्फ पानी ही नहीं किन्तु माता है, पापनाशिनी है, मोक्षदायिनी है।''

हम समझते हैं कि सच्चिदानन्द जी आस्तिक व्यक्ति हैं और वे ईश्वर की सत्ता तथा ईश्वर के सृष्टिकर्त्ता गुण में भी विश्वास करते होंगे। इसलिए उनको विदित ही होगा कि ये नदियां, समुद्र, पानी आदि प्राकृतिक पदार्थों की रचना ईश्वर करता है। तथा पिये प्राकृतिक पदार्थ स्वभावत: जड़ ही होते हैं, चेतन नहीं होते हैं। हम मनुष्यादि चेतन सत्ताएं नदियां, समुद्र, पानी आदि प्राकृतिक पदार्थों का प्रयोग करते हैं। परन्तु इन जड़ ज्ञान शून्य पदार्थों में हमारे पापों का नाश करने का तथा मोक्ष प्रदान करने का सामर्थ्य नहीं होता है। इसलिए नदियों को पापनाशिनी या मोक्षदायिनी नहीं कहा जा सकता। पाप-प्रवृत्ति से बचने के और मोक्ष प्राप्ति के साधन भिन्न हैं। इसलिए नदियों को पापनाशिनी या मोक्षदायिनी समझना अन्धविश्वास है। महर्षि मनु जी ने कहा है -

अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति।
विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति।।

(मनुस्मृति ५.१०९)

अर्थात् जल से शरीर के बाहर के अवयव, सत्याचरण से मन, विद्या और तप अर्थात् सब प्रकार के कष्ट भी सह के धर्म ही के अनुष्ठान करने से जीवात्मा, ज्ञान अर्थात् पृथिवी से लेके परमेश्वर पर्यन्त पदार्थों के विवेक से बुद्धि अर्थात् दृढ़ निश्चय पवित्र होता है । (सत्यार्थप्रकाश, तृतीय समुल्लास)

इसलिए पानी से तो शरीर के केवल बाह्य अंग ही शुद्ध हो सकते हैं, कृत पापकर्मों का नाश करने का या मोक्ष प्राप्ति कराने का सामर्थ्य नदी आदि जड़ पदार्थों में नहीं होता है। सद्भाव और प्रेम से वशीभूत होकर मिथ्या अन्धविश्वासों का समर्थन नहीं किया जा सकता। आर्यसमाज सत्यार्थप्रकाश के लिए है, मिथ्यार्थप्रकाश के लिए नहीं है।

सच्चिदानन्द जी अपने साधु-जीवन के आरम्भ से ही महर्षि दयानन्द जी तथा आर्यसमाज से प्रभावित रहे हैं। यह भिन्न बात है कि महर्षि जी के प्रशंसक होते हुए भी वे आर्यसमाजी नहीं हैं, कभी आर्यसमाज के सभासद नहीं हुए हैं। वे आर्यसमाज को ऐसे परामर्श समय-समय पर अपने लेख, व्याख्यान, व्यक्तिगत पत्र आदि के माध्यम से देते रहे हैं। गुजराती दैनिक 'सन्देश' के ११ और १८ मई १९९७ के अंकों में प्रकाशित उनके लेखों में महर्षि दयानन्द जी तथा आर्यसमाज के विषय में लिखा गया था। आर्यसमाज के प्रतिष्ठित विद्वान् डॉ. भवानीलाल भारतीय ने इन लेखों में वर्णित सच्चिदानन्द जी के विचारों की समालोचना करता हुआ एक सुदीर्घ लेख 'आर्यसमाज सम्बन्धी स्वामी सच्चिदानन्द जी की भ्रांतियों का निराकरण' शीर्षक से हिंदी में लिखा था, जिसका मेरे द्वारा किया गया गुजराती अनुवाद सैजपुरबोघा, अहमदाबाद आर्यसमाज की 'स्वस्तिपंथा' मासिक पत्रिका के जनवरी- १९९८ के अंक में प्रकाशित हुआ था, जो मैंने उसी समय सच्चिदानन्द जी को पहुँचाया था। सच्चिदानन्द जी के लेख पर गुजरात के विख्यात साहित्यकार तथा 'क्रान्ति गुरु दयानन्द', 'दयानन्द- ए पोइंटर टुवर्ड्स रिएसेसमेंट' आदि पुस्तकों के लेखक श्री नरेन्द्र दवे ने भी सच्चिदानन्द जी को एक पत्र लिखकर महर्षि दयानन्द जी एवं आर्यसमाज विषयक उनकी कतिपय टिप्पणियों का सशक्त प्रतिवाद किया था।

मैं लगभग तीन-चार दशक से सच्चिदानन्द जी के लेख एवं साहित्य पढ़ता रहा हूँ। उनके कुछ प्रवचन भी

सुने हैं, उन्हें मिला हूं और उनसे मेरा वर्षों तक पत्राचार भी रहा है। २०१० में मैंने सच्चिदानन्द जी की पुस्तकों के आधार पर कुछ महत्त्वपूर्ण विषयों पर उनके मन्तव्यों की वैदिक (आर्यसमाजी) दृष्टिकोण से तार्किक समीक्षा करती हुई एक पुस्तिका लिखने की तैयारी की थी, परन्तु यह सोचकर कि पहले उनकी अनुमति लेकर ही लिखना उचित रहेगा, मैंने उनको एक पत्र लिखकर अनुमति मांगी ।परन्तु उन्होंने मुझे अपने दिनांक २०.१०.२०१० के पत्र के द्वारा जो प्रत्युत्तर भेजा इसे पढ़कर मुझे ऐसा लगा कि वे मेरें इस विचार से क़तई प्रसन्न नहीं हैं, मैंने इसे लिखने का विचार छोड़ दिया।

गत वर्ष २५ सितम्बर २०२२ को वैदिक धर्म एवं आर्यसमाज से सम्बन्धित महानुभावों के द्वारा गुजरात में आयोजित एक कार्यक्रम में सच्चिदानन्द जी के द्वारा दिए गए व्याख्यान का वीडियो देख-सुनकर तथा उनके द्वारा इस प्रसंग पर प्रकाशित की गई अपने 'व्याख्यान' की पुस्तिका को पढ़कर मैंने एक अदने आर्यसमाजी की हैसियत से अपने विचार यहाँ प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। आशा है कि इससे आर्यसमाज के पदाधिकारियों एवं सदस्यों को श्री स्वामी सच्चिदानन्द जी परमहंस द्वारा दिए गए परामर्श आर्यसमाज के उत्कर्ष के लिए कहाँ तक और किस रूप में स्वीकार करने योग्य हैं, इसका विचार एवं निर्णय करने में कुछ सहायता प्राप्त होगी।

८/१७ टाउनशिप, पो. नर्मदानगर, भरूच (गुजरात)-३९२०१५, मो. ९८७९५२८२४७

संस्कार-विधि संवाद गोष्ठी २१-२३ सितम्बर २०२३

संस्कार-विधि के विचारणीय स्थल आमन्त्रित

महर्षि दयानन्द की द्वितीय जन्मशताब्दी के अवसर पर आर्यजगत् में उनके ग्रन्थों के उत्तम प्रकाशन पर भी चिन्तन चल रहा है। संस्कार-विधि महर्षि का महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है व व्यवहार में विभिन्न संस्कार आदि के समय बार-बार उपयोग में आता है। संस्कार विधि के उत्तम संस्करण के विचार व निर्णय हेतु परोपकारिणी सभा द्वारा सप्त सदस्यीय विद्वत् समिति बनाई गईं है। इसकी गोष्ठी २१-२३ सितम्बर २०२३ को ऋषि उद्यान अजमेर में रखी गई है। संस्कार-विधि का प्रयोग या स्वाध्याय करते समय आपकी दृष्टि में इसकी भाषा में मुद्रण दोष और विषयवस्तु में जो आन्तरिक रूप से विचारणीय स्थल प्रतीत हुए हों, उन्हें आप परोपकारिणी सभा को प्रेषित कर सकते हैं। परोपकारिणी सभा इस ग्रन्थ की उत्तम प्रस्तुति के लिए प्रयासरत है। आपके विचार शीघ्र ही मिल जायें, ऐसी अपेक्षा है। अपने विचारों की प्रस्तुति हेतु आप स्वयं भी इसी गोष्ठी में आ सकते हैं।

Email : psabhaa@gmail.com

व्हाट्सएप्प - ९४१४००६९६१

मन्त्री

परोपकारिणी सभा

जब तक सबकी रक्षा करने वाला धार्मिक राजा वा आप्त विद्वान् न हो तब तक विद्या और मोक्ष के साधनों को निर्विघ्नता से पाने के योग्य कोई भी मनुष्य नहीं होता है और न मोक्ष सुख से अधिक कोई सुख है।

महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५२

ज्ञानसूक्त – ०१

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर

लेखिका - सुयशा आर्य

प्रिय पाठक! परोपकारी पिछले कई वर्षों से आपकी सेवा में डॉ. धर्मवीर जी के वेद प्रवचनों को प्रकाशित कर रही है। इसी श्रृंखला में ऋग्वेद के प्रथम सूक्त 'अग्निसूक्त' की व्याख्यान माला प्रकाशित की जा रही है। प्रवचनों को लेखबद्ध करने का कार्य डॉ. धर्मवीर की ज्येष्ठ पुत्री श्रीमती सुयशा कर रही हैं।

-सम्पादक

बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत्प्रैरत नामधेयं दधानाः।
यदेषां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत्प्रेणा तदेषां निहितं गुहाविः।।

आज हम ऋग्वेद के कुछ नए मन्त्रों पर चर्चा कर रहे हैं। हम इस वेद ज्ञान की गंगा में अवगाहन करते हुए अनुभव करेंगे कि वो कौन सी अद्‌भुत व अपूर्व बात है जो हमें वेद से मिलती है और किसी और स्थान पर उसका वो सौन्दर्य, वो उसका बड़प्पन, वो उसका भव्य रुप दिखाई नहीं देता। ऐसा ही ऋग्वेद के १०वें मण्डल का एक सूक्त है। उस सूक्त को हम ज्ञान सूक्त के नाम से जानते हैं। यद्यपि उसके कुछ मन्त्र तो बहुत प्रसिद्ध है, लेकिन कुछ मन्त्र हमारे लिए नए हो सकते हैं। ग्यारह मन्त्रों का यह सूक्त है।

इन मन्त्रों का ऋषि बृहस्पति है और इन मन्त्रों का देवता ज्ञान है। हमें जैसा पता है कि मन्त्रों में देवता, ऋषि छन्द, स्वर आदि के माध्यम से हम मन्त्र के अर्थ को समझने में सफल होते हैं। यदि हमें इनकी जानकारी होती है तो हम मन्त्र का अर्थ गलत या विपरीत नहीं करते। मन्त्र जो कहना चाहता है, मन्त्र में जो बात बताई गई है, वही बात हम उसमें समझ सकते हैं और वही बात हमारी समझ में आती है। इसका ऋषि बृहस्पति है। वैसे सामान्य जो ज्ञान की परम्परा है उसमें दो-तीन शब्द, वाणी के साथ जो जुड़ते हैं उनमें वाचस्पति, बृहस्पति हैं। बृहस्पति देवताओं के गुरू के रुप में इतिहास में जाना जाता है। इसका सामान्य अर्थ है बृहतां पति जो समस्त बड़प्पन है, विशालता है, श्रेष्ठता है, उनका वो स्वामी है, उनका स्वामित्व है उसके पास। तो वह ज्ञानों का स्वामी है, ज्ञानवानों का स्वामी है, इसलिए वो बृहस्पति है और ज्ञानम्, ज्ञान इन मन्त्रों का देवता है, इनका विषय है, इनका मुख्य प्रतिपाद्य है।

इसका पहला जो मन्त्र है- बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत्प्रैरत नाम धेयं दधानाः। यदेषां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत्प्रेणा तदेषां निहितं गुहाविः। इसकी बहुत अच्छी चर्चा हम इस वेद ज्ञान गंगा के प्रवाह की भूमिका में कर चुके हैं। लेकिन फिर भी समझने के लिए हम इसको थोड़ा सा देख लेते हैं।

ज्ञान का सम्बन्ध वाणी से है। अर्थात् यदि हमारे पास वाणी न हो तो बोलने वाला बोलेगा नहीं, तो हम सुनेंगे क्या! और यदि हमने सुना नहीं है तो बोलेंगे क्या। इसके लिए हमारे यहाँ, जो भी ज्ञान प्राप्त होता है उसके साधन हमारी सारी ज्ञानेन्द्रियों के साथ-साथ हमारा सुनना और हमारा बोलना मुख्य है। हम दूसरे का बोला हुआ सुनते हैं और हम दूसरे को बोलकर सुनाते हैं तो इसलिए हमारे यहाँ यह जो वाणी है, हमारे यहाँ ज्ञान के प्रकाश का सबसे बड़ा कारण है, क्योंकि ज्ञान, प्रकाशित वाणी के द्वारा ही होता है, दूसरे के लिए उपयोगी वह तभी बनता है जब हम वाणी का उसमें प्रयोग करते हैं। यदि वाणी न हो तो हमारा कोई भी ज्ञान संक्रमित नहीं हो सकता, एक-दूसरे को प्राप्त नहीं हो सकता। तो यहाँ जब

हमको पहली-पहली बार वाणी से ज्ञान की प्राप्ति हुई तो उस ज्ञान का जो देने वाला है वो बृहस्पति है। और उस ज्ञान को हमारे पूर्वजों ने हमारे ऋषियों ने उससे प्राप्त किया। तो उस ज्ञान की परिस्थिति कैसी थी या कैसी होनी चाहिए या हर बार कैसी होती है? हमें एक बात याद रखनी है कि वेद की जो चर्चा है वो न तो काल विशेष की होती, न देश विशेष की होती, न परिस्थिति की होती, वो चर्चा सार्वजनीन, सार्वकालिक होती है, सब समयों के लिए होती है। इसलिए ज्ञान का प्रादुर्भाव आज हुआ हो, ज्ञान का प्रादुर्भाव पिछली सृटि में हुआ हो या ज्ञान का प्रादुर्भाव किसी और स्थान पर हुआ हो, तो ज्ञान के प्रादुर्भाव का, उत्पन्न होने का जो प्रकार है वो एक ही तरह का रहेगा, क्योंकि ईश्वर का ज्ञान अपरिवर्तनीय है, क्योंकि पूर्ण है। परिवर्तन जो है, हम समझते हैं शायद बढ़ने का कारण होता है, लेकिन हम यह भी तो जानते हैं कि परिवर्तन घटने का भी कारण होता है। जब कोई चीज घटती है, तब भी परिवर्तन होता है और जब कोई चीज बढ़ती है तब भी परिवर्तन होत है। लेकिन जो चीज पूर्णता में है उसके बढ़ने की सम्भावना नहीं होती और घट गयी तो पूर्ण नहीं रहती। इसलिए वह स्थिति सदा जैसी की तैसी होगी वह स्थिति यथा पूर्वम् अकल्पयत् होगी। आप जितनी बार करोगे, जहाँ करोगे, जिसके साथ करोगे, क्योंकि सम्पूर्णता तो एक ही होती है इसलिए वह वैसी ही होगी। तो ज्ञान का जो प्रारम्भ है, जिसको हमने पहले अच्छी तरह देखा है कि हमारे अन्दर जो दो तरह के ज्ञान हैं, एक तो स्वाभाविक ज्ञान है, एक नैमित्तिक ज्ञान है। स्वाभाविक ज्ञान हमारे जन्म के साथ हमें प्राप्त होता है और वो हमारी शरीर की आवश्यकताओं से जुड़ा है। क्योंकि भगवान् ने हमको शरीर दिया तो इस शरीर की रक्षा के, बढ़ाने के उपाय भी हमें दिए। इसमें कमी आती है तो दूर करने के उपाय भी हमें दिए। तो एक सहज स्वाभाविक ज्ञान है वो हर उस प्राणी के पास है जिसके पास उसका शरीर है और इसलिए सबका यह जो स्वाभाविक ज्ञान है उसके शरीर के अनुकूल होता है। उसका सोना, उसका जागना, उसका भोजन उसकी सन्तान जो कुछ भी है वो उस जैसा ही होता है। इसलिए हमारा जो स्वाभाविक ज्ञान है, हमारे शरीर की अपेक्षा से हमें मिला है और हमारे यहाँ साधन भी सबके अलग-अलग हैं, किसी के पास कम हैं, किसी के पास अधिक हैं। तो मनुष्य के पास सबसे अधिक साधन हैं, इसलिए यह सम्पत्ति वाला है, क्योंकि साधनों का नाम ही सम्पत्ति है और जिसके पास जितने अधिक साधन होते हैं उसको उतना ही बड़ा सम्पत्तिशाली समझा जाता है। तो सभी प्राणियों में मनुष्य जो है, यह सम्पत्तिशाली है, सबसे अधिक साधन सम्पन्न है। अर्थात् इस संसार को जानने के, उपयोग करने के, समझने के, काम में लाने के जितने साधन हो सकते हैं, वो सब मनुष्य के पास हैं। उससे अधिक ऐसा कुछ संसार में नहीं है जो जानने से बच सके। अर्थात् जो कुछ संसार में है उसे मनुष्य जान सकता है, इसलिए जानने के जितने साधन सम्भव हैं, वो सब के सब मनुष्य के पास हैं। इसलिए मनुष्य का ज्ञान भी औरों से बड़ा है, उत्कृष्ट है, अधिक है। औरों का ज्ञान उतना ही है जितने सीमित साधन हैं। औरों के पास आवश्यकता के अनुकूल ज्ञान है हमारे पास भी आवश्यकता के अनुकूल ज्ञान है, स्वाभाविक ज्ञान है, उससे हमारा भी काम चल जाना चाहिए। तो प्रश्न पैदा होता है, हमें फिर दूसरे ज्ञान की क्या आवश्यकता है? यह हमारा शरीर है, शरीर की आवश्यकतायें हैं, आवश्यकता की पूर्ति के संसार में साधन हैं, उनको प्राप्त करना, उनका उपयोग करना, यही स्वाभाविक जीवन का, स्वाभाविक ज्ञान का उद्देश्य है। यदि इतने से काम चलता है तो फिर मनुष्य को अतिरिक्त ज्ञान की क्या आवश्यकता है? यहाँ एक प्रश्न हमारे समझने का है कि बाकी जितने प्राणी हैं वो सब भोग योनि के अन्तर्गत आते हैं, उनके पास कुछ भी कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य का झगड़ा नहीं है, अच्छे-बुरे की समस्या नहीं

है, इसलिए जानने, नहीं जानने का प्रश्न नहीं है। उनको जो चाहिए वह मिला हुआ है, जैसा चाहिए वैसा मिला हुआ है, उसका वे उपयोग करते हैं, उसी से अपना जीवन पूरा कर सकते हैं और करते हैं। लेकिन मनुष्य के साथ ऐसा नहीं है। मनुष्य केवल भोग योनि नहीं है। भोग योनि होता तो निर्धारित होता। जितना निर्धारित है उसमें कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं है। जितना करने के लिए कहा जाता है उतना किया जाता है और जो नहीं कहा गया है उसके बारे में न सोचा जाता है, न किया जाता है। इसलिए मनुष्य भोग योनि के साथ कर्म योनि है। अर्थात् स्वतन्त्रता से कार्य करने का अधिकार है इसलिए पशु बुरा नहीं करता। पशु कभी झूठ नहीं बोलता, पशु कभी चोरी नहीं करता, पशु बलात्कार नहीं करता। पशु जो कुछ करता है उतना उसके जीवन के लिए स्वीकृत है। यदि उसके जीवन में चोरी है, तो चोरी उसका स्वभाव है और वो उस जाति के हर प्राणि में है। इसलिए वह दोष नहीं है, वो उसकी सिखाई गयी चीज नहीं है। किसी की इन्द्रियाँ अधिक सक्षम हैं तो वो भी उसकी स्वाभाविक है। किसी की सूँघने की शक्ति अधिक है, किसी की देखने की शक्ति अधिक है, किसी में सुनने की शक्ति ज्यादा है किसी के पास समझ ज्यादा है, तो वो उनकी अपनी परिस्थितियों के साथ जो समन्वय है, तालमेल है उसको करने के लिए जितनी आवश्यकता है, परमेश्वर ने, प्रकृति ने उतना सब उनको दिया है। अब एक प्रश्न उत्पन्न होता है कि फिर मनुष्य का उतने से काम चल जाना चाहिए। उतना काम उसका शरीर के स्तर पर चल जाता है। लेकिन मनुष्य के पास शरीर से अलग स्तर है, ऊँचा स्तर है। वो मन का, बुद्धि का, आत्मा का स्तर है। मुझे शरीर में केवल संसार का उपभोग करने के लिए नहीं भेजा है। मुझे इस शरीर के लिए तो संसार का उपयोग करना है, किन्तु इस शरीर से मुझे अपनी आत्मा की अपने परमात्मा की प्राप्ति करनी है, जो केवल संसार के साधनों से सम्भव नहीं है। संसार के साधन मेरे शरीर की सहायता करते हैं, मेरे शरीर को जीवित रखते हैं, बीमार होता हूँ तो स्वस्थ कर देते हैं, छोटा होता हूँ तो मुझे बड़ा बना देते हैं, दुर्बल होता हूँ तो सबल बना सकते हैं। तो सब हो सकता है किन्तु वो सब केवल शरीर के धरातल पर होता है। जब मैं मनुष्य बन जाता हूँ तो शरीर तो मेरे पास रहता है किन्तु जो मेरी आवश्यकता का स्तर है वो बदल जाता है, तब मेरी आवश्यकतायें केवल शारीरिक नहीं होतीं। तब मेरी आवश्यकता आत्मिक होती है, बौद्धिक होती है। तब मुझे उसके लिए भी कुछ खोजना पड़ता है, उसको प्राप्त करने के लिए मुझे अतिरिक्त साधन दिए हैं और अतिरिक्त साधनों के साथ परमेश्वर ने मुझे अतिरिक्त ज्ञान भी दिया है, जो मेरे इस शरीर के स्तर से ऊँचे स्तर के लिए है और उसका मैं उपयोग करता हूँ- शरीर के लिए भी अच्छा करता हूँ और शरीर के आगे भी करने के लिए समर्थ हूँ सशक्त हूँ। तो इस दृष्टि से जब हम विचार करते हैं तो यह वेद का जो ज्ञान है, इसका अधिकार तो सबको है, इससे कोई किसी को मना या निषेध नहीं कर सकता लेकिन प्राप्ति की योग्यता सबके पास नहीं है। यह योग्यता सबके पास नहीं है, यह इस बात से भी सिद्ध होता है कि जैसे स्वाभाविक ज्ञान सबके साथ जन्म से बराबर होता है किन्तु उसका जो दूसरा उपार्जित ज्ञान है, जिसे हम शास्त्र की भाषा में नैमित्तिक ज्ञान कहते हैं वो ज्ञान क्योंकि उपार्जित है, नैमित्तिक है, सबके पास कुछ कम-अधिक मनुष्यों के पास देखा जा सकता है तो भी उसमें कोई समानता नहीं है। यदि सबको वह ज्ञान स्वतः ही मिलता होता तो उसकी प्राप्ति के साधन और उसके उपयोग के साधन सबके बराबर होते, इसलिए स्वाभाविक ज्ञान के साधन तो सबके पास है और बराबर हैं, परन्तु नैमित्तिक ज्ञान के साधन नहीं हैं और इसलिए हमारा जो नैमित्तिक ज्ञान है, वो वेद है, वेद के द्वारा है, वो एक ज्ञानवान् से, ईश्वर से मिलता है, इसलिए हमें उसे लेना होता है, हमारी आवश्यकता होती है, हमें स्वीकार्य है।

संस्था समाचार

ऋषि उद्यान में प्रातः काल यज्ञ, वेदपाठ व वेद स्वाध्याय ब्र. चन्द्रदेव के द्वारा कराया जा रहा है। सांयकाल यज्ञ और उपासना ब्र. भानुप्रताप के द्वारा कराया जा है। प्रातः काल यज्ञ के बाद प्रवचन के क्रम स्वामी सच्चिदानन्द के द्वारा बताया गया कि स्वामी दयानन्द जी से पहले यह हिन्दू समाज फुसफुसिया अर्थात् जिसकी रीढ़ की हड्डी नहीं थी। पौराणिक जगत् के बड़े पण्डित नीलकण्ठ जिन्होंने महाभारत के एक लाख श्लोकों पर टीका लिखी है। वह भी शास्त्रार्थ में एक ईसाई पादरी से हारकर ईसाई बन गए। ब्रह्मवर्त पुराण जिसमें कि राधा को श्री कृष्ण की पत्नी, प्रेमिका, मामी बताया गया है। यह पूरा पुराण बकवास है। मुगलों ने लिखवाया है। ब्रह्मा जी ने अपनी पुत्री के साथ व्यभिचार किया। अहिल्या के साथ इन्द्र ने व्यभिचार किया। कृष्ण नहाती हुई गोपियों के वस्त्र चुरा लेते है। आदि प्रश्नों के उत्तर पौराणिक पण्डित नहीं दे सकते हैं। पहली बार महर्षि दयानन्द जी ने साहस पूर्वक कहा कि संस्कृत में जो भी कुछ भी लिखा है वह सब सत्य नहीं है। आर्यसमाज को हिन्दुओं से अलग करने के लिए बहुत बड़ा षड्यन्त्र रचा गया है? यह फैलाया गया कि आर्यसमाजी ईश्वर को नहीं मानते, नास्तिक है। राम, कृष्ण को नहीं मानते आदि। जबकि विरोधियों के सभी प्रश्नों का उत्तर देने का सामर्थ्य आर्यसमाज में है। आज हिन्दू ही ईसाई और मुसलमान बन रहे हैं। पण्डित मदन मोहन मालवीय जब मृत्यु शय्या पर थे, तब लोगों को बहुत निराशा हुई। उन्होंने पूछा कि आपके मरने के बाद सनातन धर्म की रक्षा कौन करेगा तो उन्होंने अपने पास से सत्यार्थप्रकाश निकाला और कहा यह पुस्तक मेरे बाद सनातन धर्म की रक्षा करेगी। वह स्वयं सबको सत्यार्थप्रकाश बाँटते थे।

आचार्य शक्तिनन्दन ने अथर्ववेद १९/७ के मन्त्रों के माध्यम से बताया की ग्रह, नक्षत्र का क्या स्वरूप है। जो चलते हुए नक्षत्र को छूते हुए चलते हैं वे ग्रह हैं तथा जिसका क्षरण कभी नहीं होता उसे नक्षत्र कहते हैं। सौर कुटुम्ब में अनेक नक्षत्र हैं। मुख्य नक्षत्रों की विद्वानों ने गणना की है। वे २८ नक्षत्र है। नक्षत्र अद्‌भुत हैं। परस्पर दीप्तिमान हो रहे हैं। टेढ़े-मेढ़े चलते हैं। शीघ्र वेग और निश्चित गति से चलते हैं। वेद में कृतिका नक्षत्र से प्रारम्भ किया है पर लोक में अश्विनी नक्षत्र से प्रारम्भ होता है। चन्द्र जिस प्रथम नक्षत्र को स्पर्श करता है, वह अश्विनी है। इसी कारण अश्विनी नक्षत्र से प्रारम्भ मानते हैं। कुछ नक्षत्र स्थिर होते हैं, कुछ मृदु स्वभाव, लघु स्वभाव, उग्र स्वभाव, दारुण स्वभाव के होते हैं। ये नक्षत्र हमारे लिए कल्याण करने वाले हों। साथ ही आपने यह भी बताया कि देव लोग अर्थात् विद्वान् लोग कैसे मनुष्य को चाहते हैं। जो पुरुषार्थी, उद्यमी कर्मठ होते हैं। तन्द्रा रहित अर्थात् तमोगुण से रहित होते हैं। आलसी नहीं होते। शेखचिल्ली के समान केवल सपने नहीं देखते हैं। हम अनेक विषय में कुशल ना हों। लेकिन अपनी रुचि के कोई एक विषय में हमें अवश्य ही कुशल होना चाहिए। इससे हमारा जीवन ठीक चल जाएगा। हमें आलस्य, प्रमाद की हानियों पर बार-बार विचार करना चाहिए तथा पुरुषार्थ करने से प्रसन्नता होती है, सुख मिलता है, इस पर भी सदा विचार करते रहना चाहिए।

श्री देवमुनि ने सामवेद के मन्त्र के माध्यम से बताया कि हे प्रभो हमें ऐसा बना दो कि हम ज्ञान प्राप्त करें। ज्ञान के आधार पर परस्पर हम एक-दूसरे का सहयोग करें। एक-दूसरे का सम्मान करें। एक-दूसरे की गलतियों को समझें, क्रोधित न हों, अभिमानी ना हों, हृदय को खुला रखते हुए घर परिवार के सदस्यों के साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करें।

ब्रह्मचारी अभिषेक ने ईश्वर के नामों के बारे में बताया कि अव् धातु से १९ अर्थ होते हैं। ईश्वर सबकी प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से रक्षा करता है। संसार को गति

दे रहा है। सब जगह पहुँचा हुआ है। सब को जानता है। सब को प्राप्त है। प्रकाशक है। सूर्य आदि प्रकाशित लोकों को बनाता है। सबसे प्रीति करता है। सबके अन्दर प्रविष्ट है। मोक्ष का दाता है। सबको सुनता है। पूर्ण आनन्द से युक्त है। जो ईश्वर का ध्यान करते हैं। वे भी आनन्द से युक्त हो जाते हैं। सब लोग ईश्वर से याचना करते हैं। प्राणी मात्र सुखी रहे ऐसी ईश्वर की इच्छा है। बुरे काम करने वालों को रुलाता है। पृथ्वी आदि पदार्थ बना कर हमें दान में दे रखे हैं। प्रलय समय में कार्य पदार्थों को अलग-अलग कर देता है।

ब्रह्मचारी इन्द्र ने विश्वानि देव मन्त्र के बारे में बताया कि यह मन्त्र महर्षि दयानन्द जी का बहुत ही प्रिय मन्त्र रहा है। उत्पत्ति व प्रेरककर्त्ता ईश्वर से प्रेरणा लेना चाहते हैं। हमारे जितने भी दुर्गुण हैं वह सब को दूर कर दे। जीवन में एक भी दुर्गुण नहीं होना चाहिए। वेद के एक मन्त्र में सप्त मर्यादा ये बताई, इनका पालन न करना दुर्गुण है। न्याय दर्शन में १० दुर्गुणों को बताया गया है। भद्र दो प्रकार का होता है। विद्या से प्राप्त अभ्युदय राज्य, इष्ट मित्र ,पत्नी, पुत्र आदि शरीर का सुख यह सब भद्र है, और नि:श्रेयस, मुक्ति सुख यह भी भद्र है। हमें यह दोनों सुख प्राप्त कराइए। प्रार्थना पूर्ण पुरुषार्थ के साथ ही होनी चाहिए। यह भी हमें ध्यान रखना है।

ब्रह्मचारी चन्द्रदेव ने संस्कृत में बताया कि संस्कृत वाङ्मय में राष्ट्रीय भावना क्या होती है? राष्ट्र केवल भूभाग या जनसमूह का नाम नहीं अपितु इसके साथ ही राष्ट्र के प्रति प्रेम, उन्नति की भावना, राष्ट्र की भौतिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक सम्पदा के प्रति आत्मीयता का भाव, राष्ट्र की विपत्ति को अपनी विपत्ति मानना, राष्ट्र के प्रति मातृवत् भाव। जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी महान् है। अपने राष्ट्र के प्रति जो भाव हमारे न्यून हुए हैं। उसका कारण परतन्त्र मानसिकता का होना, भारतीय शिक्षा का विनाश, विदेशियों का अनुकरण, अश्लील चलचित्र, नैतिक शिक्षा के स्थान पर उदरपोषण की शिक्षा ईश्वर का ध्यान छोड़कर भोगाभ्यास, धनलिप्सा, पदलिप्सा, अपनी प्रशंसा आदि अनेक कारण है। यदि हम लोग विदेशी संस्कृति को अपनाते हैं तो हमें अवश्य सोचना चाहिए कि जब जब सूर्य पश्चिम में गया है तब तक डूबा है। हम संस्कृत भाषा को पढ़कर अपने राष्ट्र के प्रति कर्त्तव्य को और अच्छी तरह समझ सकते हैं।

आचार्य कर्मवीर ने बताया की कुछ लोग कहते हैं कि इश्क और जंग में सब जायज है। इसमें तीनों शब्दों को ध्यान से देखिए। इश्क, जंग और जायज यह तीनों शब्द उर्दू, फारसी के हैं। यदि सामने वाले ने हमारे इश्क को स्वीकार नहीं किया तो उसे पत्थरों से मारना, उसके टुकड़े-टुकड़े करके जान ले लेना आदि यह इश्क नहीं है। भारतीय संस्कृति में इसके समानान्तर शब्द प्रेम है। जो त्याग सिखाता है। जिससे माता स्वयं भूखी रहती हुए अपने बच्चों को खिलाती है। परिवार के सभी लोगों के भोजन कर लेने पर भोजन करती है। प्रेम में त्याग करना होता है। जहाँ स्वार्थ घुस जाता है वहाँ प्रेम नहीं होता। इसी तरह युद्ध में युद्ध के भी नियम होते हैं लड़ाई हमेशा बुराई से होती है ।जब वह बुराई किसी व्यक्ति में हट जाए तो उस व्यक्ति से अनावश्यक द्वेष नहीं करना चाहिए। जितना समर्थ्य है उतना हमें बुराई का विरोध करना चाहिए। लड़ाई-झगड़े के बिना संसार चलाना तो दूर घर भी नहीं चलता। गीता का उपदेश बुराइयों को नष्ट करने के लिए ही कहा गया है।

भजन के क्रम में - पं. लेखराज जी- तेरी माया का प्रभु जी पाया न कोई पार ऋषि मुनि हारे हैं। पं. भूपेन्द्र जी - कभी नहीं सोचा तूने बैठ के अकेले में, कौन है तेरा तू है किसका श्री आदित्य मुनि ने जीवन में तुम कभी भी ईश्वर को ना भुलाना यह भजन गाया।

अतिथि होता- अजमेर निवासी श्री बद्रीप्रसाद पंचोली जी के सुपुत्र श्री इन्दुशेखर का ५६वां जन्मदिवस मनाया गया। आपने सांयकाल यज्ञ कर जन्मदिवस के मन्त्रों से आहुति देकर अपना जन्मदिवस मनाया तथा देव मुनि जी आदि के द्वारा आशीर्वाद प्रदान किया गया।

ऋषि मेला-२०२३ हेतु दुकान (स्टॉल) आवंटन

प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष ऋषि मेला १७, १८ व १९ नवम्बर (शुक्रवार, शनिवार व रविवार) २०२३ को ऋषि उद्यान में आयोजित होगा। उसमें आर्यजगत् का साहित्य, हवन सामग्री, अन्यान्य सामग्री की दुकान लगती हैं। इस वर्ष से स्टॉल किराया २०००=००रूपये प्रति स्टॉल किया गया है। खुले में या अपनी इच्छानुसार स्टॅाल लगाना निषिद्ध रहेगा। आप अपना पूर्ण सहयोग देकर इस कार्य में सहयोग करावें। जिन महानुभावों की पहले राशि जमा होगी उस क्रम से स्टॉल का निर्धारण होगा। ऋषि मेला-२०२३ हेतु दुकान (स्टॉल) आवंटन में तीन आधार रहेंगे- १- आर्य धार्मिक पुस्तक, २- हवन सामग्री, ओ३म् ध्वज आदि, ३- दवाईयाँ। आपको जितनी स्टॉल की आश्यकता है उसी अनुरूप राशि बैंक ड्रॉफ्ट या नगद या ऑनलाइन जमा करावें।

स्टॉल सुविधाः- कारपेट, दो टेबल, दो कुर्सी, २ ट्यूब लाइट प्रति स्टॉल। **स्टॉल साइज**-७.५×१५ फीट।

ध्यातव्य- १. स्टॉल में रखी टेबल, कुर्सी आदि पूर्व निर्धारित सामग्री को इधर-उधर या अन्य स्टॉल में न बदलें। **२.** अतिरिक्त सामग्री की आवश्यकता हो तो टैन्ट हाउस के कर्मचारी से सम्पर्क कर प्राप्त करें तथा निर्धारित राशि तुरन्त भुगतान करें। **३.** बिस्तर, रजाई, चादर, तकिया को टेन्ट हाउस कर्मचारी से प्राप्त कर निर्धारित राशि जमा करा दें। **४.** स्टॉल व्यवस्थापक को राशि की रसीद दिखाकर स्टॉल संख्या प्राप्त करें। बिना पूर्व अनुमति के स्टॉल में सामान न रखें, न अधिकृत करें। **५.** आपके सक्रिय सहयोग व अनुशासन की अपेक्षा है। अनियमितता को स्थान न देवें। ६. अपना मोबाइल (चलभाष) नम्बर देना अति आवश्यक है। ७. आप अपना स्थाई पता अवश्य देवें। ८. स्टॉल में आप पुस्तकें/दवाइयाँ/अन्य सामग्री का उल्लेख अवश्य करें। ९. स्टॉल आवंटन हेतु अग्रिम राशि जमा करावें, अन्यथा विचार सम्भव नहीं होगा। १०. एक पासपोर्ट फोटो भिजवावें, जो परिचय पत्र के साथ अंकित हो। उसमें स्टॉल आवंटन संख्या भी अंकित की जायेगी। ११. स्टॉल आवंटन की सूचना निर्धारित अवधि में दी जायेगी। **नोटः**- किसी प्रकार का अवैदिक साहित्य एवं सामग्री न हो अन्यथा उचित कार्यवाही सम्भव होगी।

सम्पर्क-देवमुनि- ७७४२२२९३२७

परोपकारिणी सभा के आगामी शिविर व कार्यक्रम

०१.	संस्कार-विधि संवाद गोष्ठी	-	२१, २२, २३ सितम्बर-२०२३
०२.	डॉ. धर्मवीर स्मृति दिवस	-	०६ अक्टूबर-२०२३
०३.	साधना-स्वाध्याय-सेवा शिविर	-	२९ अक्टूबर से ०५ नवम्बर-२०२३
०४.	ऋषि मेला	-	१७, १८, १९ नवम्बर-२०२३
०५.	सृष्टि सम्वत् की एकरूपता संवाद	-	१६ व १७ दिसम्बर-२०२३

कृपया शिविर में भाग लेने के इच्छुक शिविरार्थी पूर्व से ही प्रतिभाग की सूचना दें।

मनुष्यों को चाहिये कि अपने पुरुषार्थ से सुवर्ण आदि धन को इकट्ठा कर घोड़े आदि उत्तम पशुओं को रक्खें क्योंकि जब तक इस सामग्री को नहीं रखते तब तक गृहाश्रमरूपी यज्ञ परिपूर्ण नहीं कर सकते इसलिये सदा पुरुषार्थ से गृहाश्रम की उन्नति करते रहें। **- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६३**

''सप्तदिवसीय राष्ट्रीय वैदिक-स्वर-सन्धान कार्यशाला''

महर्षि दयानन्द सरस्वती की द्विजन्म शताब्दी के उपलक्ष्य में आयोजित किए जा रहे

विविध कार्यक्रमों की शृंखला में -

महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर तथा परोपकारिणी सभा के संयुक्त तत्त्वावधान में **''सप्तदिवसीय राष्ट्रीय वैदिक-स्वर-सन्धान कार्यशाला''**

का शुभारम्भ १४ अगस्त को विश्वविद्यालय के स्वराज भवन में उद्घाटन सत्र के साथ हुआ। जिसमें माननीय कुलपति प्रो. अनिल कुमार शुक्ला, माननीय मुनि सत्यजित् आर्य, माननीय श्री ओंकारसिंह लखावत (पूर्व सांसद राज्यसभा), अजमेर का उद्बोधन प्रेरणादायक रहा। माननीय आचार्य रवीन्द्र जी ने सस्वर वेदपाठ के साथ इसकी सुदीर्घ परम्परा से अवगत कराया। दयानन्द शोधपीठ की निदेशिका ने शोधपीठ का कार्यवृत्त प्रस्तुत किया।

चेयर प्रोफेसर डॉ. नरेश कुमार धीमान् ने संक्षेप में इस कार्यशाला की कार्ययोजना की रूपरेखा प्रस्तुत की। अन्त में शोध पीठ के पूर्व निदेशक प्रोफेसर प्रवीण माथुर ने धन्यवाद ज्ञापन किया। मञ्च-संचालन डॉ. राजू शर्मा ने किया।

दोपहर बाद का सत्र विश्वविद्यालय के चरक भवन में आयोजित हुआ, जिसमें आचार्य रवीन्द्र जी, हमीरपुर (उ.प्र.) ने ''वेदों के सस्वर उच्चारण की परम्परा और उसका वैशिष्ट्य'' विषय पर अपना सारगर्भित वक्तव्य दिया। प्रो. नरेश कुमार धीमान् ने ''वैदिक स्वर विषयक सामान्य परिचय एवं विभिन्न संहिताओं में स्वराङ्कन के प्रकार'' विषय पर अपनी प्रस्तुति दी।

१५ अगस्त से २० अगस्त तक की कार्यशाला के सभी सत्र परोपकारिणी सभा, ऋषि उद्यान अजमेर में आयोजित किए गए। यहाँ अतिथि विद्वानों तथा प्रतिभागियों के आवास एवं भोजनादि की समुचित व्यवस्था परोपकारिणी सभा ने की, इसमें आचार्य कर्मवीर तथा श्री नन्दकिशोर का विशेष सहयोग रहा। ऋषि उद्यान में मंच संचालन का उत्तरदायित्व का निर्वहन आचार्य शक्तिनन्दन ने किया। प्रो. आशुतोष पारीक ने कार्यशाला के सभी सत्रों के प्रतिवेदन तैयार किये, जो शोधपीठ के रिकॉर्ड के लिए उपयोगी रहेगा।

कार्यशाला के सभी सत्रों में आचार्य रवीन्द्र जी ने सस्वर वेदपाठ का अभ्यास प्रतिभागियों द्वारा बड़ी निष्ठा से करवाया। इसके अतिरिक्त आचार्य रवीन्द्र तथा प्रो. नरेश कुमार धीमान् ने जिन विषयों को केन्द्रित कर प्रशिक्षण प्रदान किया उनका विवरण इस प्रकार है-

आचार्य रवीन्द्र जी, हमीरपुर (उ.प्र.) ने - ''वेदों के सस्वर उच्चारण की परम्परा का वैशिष्ट्य'' ''स्वर की परिभाषा, भेद, उच्चारण एवं स्वरित के विविध भेद'' ''पदार्थ और वाक्यार्थ पर स्वर का प्रभाव'' ''पदपाठ में अवग्रह, इतिकरण, स्थितोपस्थित, पदकाले ह्रस्व, सत्व-षत्व-णत्व विधि आदि पर पर विस्तार से चर्चा'' ''पदपाठ की प्राचीन परम्परा और मन्त्रार्थ में इसकी उपयोगिता'' ''वेदों में कम्प-स्वर का कारण और उसका उच्चारण वैशिष्ट्य'' ''सामवेद में स्वराङ्कन का प्रकार और उसका अन्य वेदों में प्रयुक्त स्वराङ्कन विधि से वैशिष्ट्य'' ''पदों में पाणिनीय क्रम से स्वर-संचार की सामान्य विधि : 'तिङ्ङतिङ:' स्वर एवं इसके अपवाद, सोपसर्ग एवं निरुपसर्ग'' ''समस्तपदों में स्वर-संचार की सामान्य विधि, उनके अपवाद, सामन्त्रितपद तथा प्रगृह्य संज्ञक पदों में स्वर विधान'' ''वेद में व्यत्यय तथा 'बहुलं छन्दसि' सूत्र का निहितार्थ'' ''मन्त्रार्थ में स्वर की उपेक्षा के दुष्परिणाम'' तथा ''कार्यशाला में सस्वर मन्त्राभ्यास

की उपलब्धियाँ'' विषयों पर अपनी प्रस्तुति दी।

प्रो. नरेश कुमार धीमान्, चेयर-प्रोफेसर, महर्षि दयानन्द सरस्वती चेयर (यूजीसी) ने- ''अनङ्कित उदात्त एवं प्रचय, अधोरेखीय अनुदात्त एवं निघात तथा उदात्ताश्रित एवं स्वतन्त्र स्वरित की पहचान और इनका सोदाहरण अभ्यास''' 'विभिन्न वैदिक चिह्न, परिचय एवं उनका यूनिकोड में स्वीकरण'' ''उदात्तादि स्वरों की परस्पर सन्धि/सन्धिच्छेद, का सोदाहरण अभ्यास'' ''पदपाठ में अवग्रह, इतिकरण, स्थितोपस्थित, पदकाले ह्रस्व, सत्व-षत्व-णत्व विधि आदि विषयों का सोदाहरण अभ्यास'' ''संहितापाठ से पदपाठ निर्माण की विधि एवं सोदाहरण अभ्यास'' ''कम्पस्वर के स्थल एवं वेदानुसार उनका स्वराङ्कन, अवग्रह और विवृति के स्थल एवं उनमें भेद, माध्यन्दिन संहिता के द्विविधपाठ की प्रक्रिया, उसमें प्रयुक्त विविध प्रकार के विसर्ग-चिह्न एवं उनके स्थल तथा प्रयोग'' ''व्याख्यान में वर्णित विषय के अनुरूप सामवेदीय संहिता तथा पदपाठ में उदात्तादि स्वरों की पहचान कर संहिता से पदपाठ निर्माण में उसके उपयोग का सोदाहरण अभ्यास'' ''यजुर्वेद में उत्तम संज्ञक पदों का वैकल्पिक पदपाठ तथा चारों वेदों में पदपाठ से संहितापाठ के निर्माण की विधि एवं सोदाहरण अभ्यास'' ''वेदों में समास के विशिष्ट प्रयोग, सामवेद में प्रयुक्त छलाक्षरविधि की परम्परा, उपादेयता एवं उसका सोदाहरण अभ्यास'' ''आधुनिक यान्त्रिक तकनीकों के वैदिक स्वर विषयक कार्यों में उपयोग की विधि एवं सोदाहरण अभ्यास'' तथा ''वैदिक-स्वर-संधान कार्यशाला का उपसंहार, प्रतिभागियों के अनुभव एवं परामर्श'' विषयों को सम्मिलित करते हुए अपनी प्रस्तुतियाँ दी।

सभी प्रतिभागियों ने सम्पूर्ण गतिविधियों का भरपूर लाभ लेते हुए वैदिक स्वर सन्धान की प्रक्रिया को समझने एवं सीखने का प्रयास किया।

प्रतिभागी महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रयोग में लाई गई वस्तुओं, उनके हस्तलिखित ग्रन्थों, जीवन-चरित्र-चित्रावली आदि का दर्शन तो ऋषि उद्यान में कार्यशाला के अतिरिक्त समय में कर ही चुके थे। शनिवार, १९ अगस्त, २०२३ को सभी प्रतिभागियों के शैक्षणिक-भ्रमण की व्यवस्था की गई। आवागमन के लिए बसों की व्यवस्था की गई। इस भ्रमण में महर्षि दयानन्द से सम्बन्धित अजमेर तथा पुष्कर के पर्यटन-स्थलों को सम्मिलित किया गया। भ्रमण में मुनि सत्यजित आर्य ने महर्षि दयानन्द सरस्वती उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर के ऐतिहासिक महत्त्व, महर्षि के ग्रन्थों की पाण्डुलिपियों, विशाल वैदिक पुस्तकालय, अति प्राचीन वैदिक यन्त्रालय की न केवल जानकारी प्रदान की अपितु पाण्डुलिपियों की बहुरंगी प्रतिलिपियों का भी दर्शन करवाया, जो प्रतिभागियों के लिए अत्यन्त प्रेरक तथा कौतुहलपूर्ण क्षण रहा। महर्षि के निर्वाण स्थल भिनाय कोठी में भी भ्रमण करवाया गया और उसके इतिवृत्त तथा उसकी भावी योजनाओं से भी अवगत करवाया। प्रतिभागियों ने इस निर्वाण स्थल पर विद्यमान उस भवन-विशेष जिसमें महर्षि ने अपना अन्तिम श्वास लिया तथा वह चित्रण जो विभिन्न जीवन-चरित्रों में मिलता है, का परस्पर सामने देखकर बड़ा सुखद अनुभव किया। मलूसर में स्थित 'मोक्षधाम-श्मशान-घाट' का प्रतिभागियों ने भ्रमण किया, जहाँ महर्षि के शव को अग्नि में समर्पित किया गया था। भ्रमण के अन्तिम पड़ाव पर सभी बसें प्रतिभागियों को लेकर पुष्कर पहुँचीं। पुष्कर के अति प्राचीन ब्रह्मा जी के मन्दिर में सभी प्रतिभागियों ने प्रवेश किया, पूरे मन्दिर की प्रदक्षिणा करी। अन्त में उस विशेष ऐतिहासिक कुटिया की ओर बढ़े जिस पर लगा शिलालेख बता रहा था कि इसी पवित्र कुटिया मे ठहरकर महर्षि ने पवित्र ऋग्वेद का भाष्य किया। कुछ पुराने ग्रन्थ एवं पाण्डुलिपियों का संग्रह भी इस स्थान की भव्यता में अभिवृद्धि कर रहा था।

समापन सत्र में प्रतिभागियों में से जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय की शोधछात्रा प्राची आर्या, ए.के.पी

(पीजी) कॉलेज खुर्जा बुलन्दशहर उत्तर प्रदेश की प्राध्यापिका डॉ. मनु, आचार्य शैलेन्द्र कुमार द्विवेदी, डॉ. निरंजन साहू, डॉ. आशुतोष पारीक आदि ने अपने अनुभवों को साझा किया। सभी ने मुक्तकण्ठ से इस कार्यशाला की प्रशंसा की।

मुनि सत्यजित् आर्य ने अपने सम्बोधन में वेदपाठ में उच्चारण की परम्परा, वेद के अर्थ में स्वर के महत्त्व और स्वरों के द्वारा प्रकट होने वाले अर्थों की ओर विशेष ध्यान दिलाया। उन्होंने अपने वक्तव्य में कहा कि वेद मंत्रों में दिखाई देने वाली ये खड़ी पड़ी रेखाएं केवल अपने रूप को ही नहीं दिखाती अपितु वेद मंत्रों में प्रयुक्त होकर वे उनमें विशेष अर्थ का भी प्रकटीकरण करती हैं।

अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में माननीय कुलपति प्रोफेसर अनिल कुमार शुक्ला ने विश्वविद्यालय और परोपकारिणी सभा के संयुक्त तत्त्वावधान में किए जा रहे इस विशेष प्रयास की भरपूर सराहना की। उन्होंने संस्कृत के एक सुभाषित को उद्धृत करते हुए कहा कि संसार में तीन प्रकार के लोग होते हैं एक वे जो किसी विघ्न के भय से कार्य को आरम्भ ही नहीं करते। दूसरे वे जो कार्य को आरंभ तो कर लेते हैं, परंतु किसी भी कठिनाई के सामने आने पर वे उस कार्य को बीच में ही छोड़ देते हैं। तीसरे वे लोग होते हैं जो बार-बार कठिनाई के आने पर भी अपने उद्देश्य से विचलित नहीं होते। ये तीसरी कोटि के लोग ही उत्तम कोटि के लोग कहे जाते हैं। वेद के स्वर तथा उससे संबन्धित जो परम्पराएँ लुप्त होती जा रही हैं उन्हें पुनर्जीवित करने का कार्य उत्तम कोटि की श्रेणी में आता है जिसे प्रोफेसर धीमान् बड़ी निष्ठा से कर रहे हैं। आचार्य रवीन्द्र ने पूरा सप्ताह वेदपाठ का प्रशिक्षण देकर एक अभाव की पूर्ति की है। दोनों ही विद्वान धन्यवाद के पात्र हैं। उन्होंने कहा कि शोधपीठ एवं परोपकारिणी सभा मिलकर इसी प्रकार नई-नई योजनाएं बनाकर कार्यक्रम आयोजित करते रहें, विश्वविद्यालय उनमें पूर्ण सहयोग करता रहेगा।

इसके पश्चात् माननीय कुलपति जी एवं माननीय मुनि सत्यजित् जी द्वारा प्रतिभागियों को प्रमाणपत्र प्रदान किए गए। महर्षि दयानन्द शोधपीठ के पूर्व निदेशक प्रो. प्रवीण माथुर ने उपस्थित विद्वानों एवं प्रतिभागियों के प्रति धन्यवाद ज्ञापित किया।

सत्र की कार्यशाला में मंच-संचालन के उत्तरदायित्व का निर्वहन डॉ. आशुतोष पारीक ने किया। शान्तिपाठ के साथ कार्यशाला सम्पन्न हुई।

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान, अजमेर में कई वर्ष से संचालित आयुर्वैदिक चिकित्सालय का पुन: आरम्भ २६ अगस्त को किया गया है। यह चिकित्सालय सोमवार को छोड़ सप्ताह में ६ दिन मार्च से अक्टूबर सायं ५ से ७ बजे तक व नवंबर से फरवरी सायं ४ से ६ बजे तक दो घण्टे खुलेगा।

इसमें वरिष्ठ आयुर्वेद चिकित्सक की सेवा उपलब्ध है। चिकित्सा परामर्श व चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। यदि आप अपने धन को इस पुण्य कार्य में लगाना चाहते हैं, तो परोपकारिणी सभा के बैंक खाते में सहयोग भेज सकते हैं। सहयोग भेजकर ८८९०३१६९६१ पर सूचित अवश्य कर देवें। **- मन्त्री**

जैसे पवन सब को सुख देता हुआ सब के रहने का स्थान हो रहा है वैसे ही विद्वान् को होना चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.४१

।। ओ३म् ।।

परोपकारिणी सभा, अजमेर के तत्त्वावधान में

१४० वाँ ऋषि बलिदान समारोह

कार्तिक शुक्ल चतुर्थी से षष्ठी, संवत् २०८० तदनुसार

दिनांक १७, १८, १९ नवम्बर २०२३, शुक्र, शनि, रविवार

विराट् व्यक्तित्व महर्षि दयानन्द की समग्र मानव जाति ऋणी है। इस ऋण के प्रति कृतज्ञता को प्रकट करने का स्वर्णिम-अवसर ऋषि के १४०वें बलिदान वर्ष के उपलक्ष्य में हमको पुनः प्राप्त हुआ है। इस अवसर पर परोपकारिणी सभा भव्य समारोह का आयोजन करने जा रही है। मुख्य कार्यक्रमों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :-

अथर्ववेद पारायण यज्ञ- 'अथर्ववेद पारायण यज्ञ' का आरम्भ मंगलवार १४ नवम्बर से होगा व इसकी पूर्णाहुति बलिदान समारोह के अन्तिम दिन १९ नवम्बर को प्रातः १० बजे होगी। यज्ञ के ब्रह्मा आर्यजगत् के प्रतिष्ठित विद्वान् होंगे।

ध्वजारोहण व उद्घाटन- बलिदान समारोह का विधिवत् उद्घाटन ओ३म् ध्वजा के आरोहण व प्रधान जी के उद्‌बोधन के साथ किया जायेगा।

उपदेश-प्रवचन-भजन- प्रातः यज्ञ के बाद आध्यात्मिक प्रवचन होंगे। पूर्वाह्ण, अपराह्ण व रात्रि में आयोजित विभिन्न प्रासंगिक विषयों वाले सत्रों में आर्यजगत् के विशिष्ट संन्यासियों, विद्वानों, आचार्यों के विचार सुनने को मिलेंगे। साथ ही भजनोपदेशकों के मधुर भजनों का आनन्द भी प्राप्त होगा।

वेदगोष्ठी - प्रतिवर्ष की परम्परा के अनुसार इस वर्ष भी वेदगोष्ठी साथ में होगी। परोपकारिणी सभा के पूर्वप्रधान स्व. श्री गजानन्द आर्य की स्मृति में परोपकारिणी सभा, अजमेर व महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर एवं अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ, दिल्ली के संयुक्त तत्त्वावधान में वेदगोष्ठी का आयोजन किया जायेगा। इस गोष्ठी में देश के विविध विद्वान् अपने शोधपूर्ण मौलिक विचार प्रस्तुत करेंगे। इस वर्ष वेदगोष्ठी का विचारणीय बिन्दु है- **महर्षि दयानन्द का समाजिक चिन्तन व वेद।** जो विद्वान् गोष्ठी में शोधपत्र प्रेषित करना चाहते हैं, वे ३१ अक्टूबर तक सभा के पते पर प्रेषित करवा देवें। १७, १८, १९ नवम्बर को ऋषि बलिदान समारोह के कार्यक्रमों के साथ-साथ वेदगोष्ठी भी चलती रहेगी। ऋषि-भक्त इसे सुनने का लाभ उठा सकते हैं।

वानप्रस्थ एवं संन्यास दीक्षा- इस अवसर पर शुक्र-शनि दिनाङ्क १७ व १८ को दिन में क्रमशः वानप्रस्थ व संन्यास संस्कार भी कराया जायेगा। वानप्रस्थ व संन्यास दीक्षा लेने के इच्छुक व्यक्ति ३१ अक्टूबर तक अपना परिचय आदि जीवनवृत्त परोपकारिणी सभा को भिजवा देवें। उन पर विचार के बाद इसके योग्य व्यक्तियों को वानप्रस्थ या संन्यास दीक्षा देने का निश्चय किया जायेगा।

चतुर्वेद कण्ठस्थीकरण प्रतियोगिता- प्रतिवर्ष आयोजित की जाने वाली इस प्रतियोगिता में २१ वर्ष तक के छात्र भाग ले सकते हैं। किसी भी एक वेद को आद्योपान्त स्मरण करके इस प्रतियोगिता में भाग लिया जा सकता है। जो छात्र जिस वेद पर गत वर्षों में पारितोषिक ग्रहण कर चुके हैं, वे उस वेद से अतिरिक्त वेद स्मरण करके भाग ले सकते हैं। १८ नवम्बर को परीक्षा एवं १९ नवम्बर को पुरस्कार-वितरण का कार्यक्रम होगा। जो छात्र इस प्रतियोगिता में भाग लेना चाहते हैं, वे अपने-अपने गुरुकुलों, आश्रमों, संस्थानों से आचार्य द्वारा अधिकृत पत्रक पर २-छायाचित्र सहित अपना परिचय ३१ अक्टूबर, २०२३ तक आचार्य महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, अजमेर के पते पर भेज दें।

सम्मान - प्रतिवर्ष विशिष्ट वैदिक विद्वान्, विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को इस समारोह में सम्मानित किया जाता है। इस वर्ष भी सम्मान-समारोह होगा। जिसमें १७ विद्वान्-विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को सम्मानित किया जायेगा। इनके विशेष योगदान को बताते हुए इनका परिचय भी दिया जायेगा।

आर्यवीर दल व्यायाम प्रदर्शन- इस समारोह में शनिवार दिनाङ्क १८ को सायंकाल आर्यवीरों व ब्रह्मचारियों द्वारा व्यायाम-आसन आदि का भव्य प्रदर्शन किया जायेगा।

आर्यसाहित्य व यज्ञादि उपकरणों का विक्रय- इस अवसर पर परोपकारिणी सभा के अतिरिक्त भी अनेक पुस्तक प्रकाशकों-विक्रेताओं की पुस्तकें, यज्ञ-पात्र-ध्वजा आदि, आयुर्वेदिक औषधियों की दुकानें लगेंगी। इनके क्रय का अवसर प्राप्त होगा।

ऋषि लंगर- बलिदान समारोह में पधारे सभी श्रद्धालुओं के लिए ऋषि उद्यान में परोपकारिणी सभा द्वारा पौष्टिक, स्वादिष्ट प्रातराश एवं दो समय के भोजन की व्यवस्था की गई है।

नवम्बर के आरम्भ में अजमेर में हल्की ठंड होने लगती हैं, ऋषि उद्यान खुले में होने से सर्दी का प्रभाव कुछ अधिक रहेगा। रात्रि में कम्बल ओढ़ने जैसी ठण्ड रहेगी। जो समूह में रहना चाहते हैं उनकी निवास व्यवस्था ऋषि उद्यान में होगी और जो अपने निवास की व्यवस्था होटल-धर्मशाला में करवाना चाहते हैं, कृपया वे सभा कार्यालय से पूर्व सम्पर्क कर अग्रिम राशि जमा करवा कर कमरा आरक्षित करवा लें। सभी से विशेष निवेदन है कि अपने आने की सूचना कम से कम एक सप्ताह पूर्व दे देवें, जिससे संख्या का अनुमान होकर तदनुसार व्यवस्था की जा सके। सभी से निवेदन है कि १४०वें बलिदान समारोह में अपने परिवार व समाज के सभी कार्यकर्त्ताओं सहित पधार कर महर्षि को हार्दिक श्रद्धांजलि प्रदान करें, महर्षि दयानन्द के स्वप्न को साकार करने हेतु प्रेरणा उत्साह प्राप्त कर प्रचार-प्रसार को एक नई चेतना प्रदान करें।

ऋषि मेले में आर्यजगत् के अनेक प्रसिद्ध संन्यासी, मुनि, विद्वान्, आचार्य, भजनोपदेशक आदि पधार रहे हैं।

इस समारोह हेतु आपका आर्थिक सहयोग आयकर की धारा '८०-जी' के अन्तर्गत दिए गये प्रावधान के अनुरूप कर मुक्त होगा। विदेश में निवास कर रहे धर्मप्रेमी सज्जन स्वदेश में होने वाले इस समारोह हेतु मुक्त हस्त से दान देकर देश का गौरव बढ़ाएँ। आपका सहयोग ही हमारा सम्बल है। शुभकामनाओं सहित।

www.paropkarinisabha.com email : psabhaa@gmail.com

सत्यानन्द आर्य
प्रधान

मुनि सत्यजित्
मन्त्री

गुरुकुल प्रवेश सूचना

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषिउद्यान, अजमेर में संस्कृत भाषा, पाणिनीय व्याकरण, वैदिक दर्शन, उपनिषदादि के अध्ययन हेतु प्रवेश आरम्भ किये गए हैं। इन्हें पढ़कर वैदिक विद्वान्, उपदेशक, प्रचारक बन सकते हैं। कम से कम दसवीं कक्षा उत्तीर्ण १६ वर्ष से बड़े युवकों को प्रवेश मिल सकता है। प्रवेशार्थी को पहले ३ माह का अस्थाई प्रवेश दिया जाएगा। इस काल में अध्ययन व अनुशासन में सन्तोषजनक स्थिति वाले युवकों को ही स्थाई प्रवेश दिया जाएगा। सम्पूर्ण व्यवस्था नि:शुल्क है। गुरुकुल में अध्ययन के काल में किसी भी बाहर की परीक्षा को नहीं दिलवाया जाएगा, न उसकी अनुमति रहेगी। प्रवेश व अधिक जानकारी के लिए-

चलभाष : ७०१४४४७०४० पर सम्पर्क कर सकते हैं। सम्पर्क समय- अपराह्न ३.३० से ४.३०।

वेदगोष्ठी-२०२३

(कार्त्तिक शुक्ल चतुर्थी से षष्ठी, संवत् २०८० तदनुसार १७, १८ एवं १९ नवम्बर, २०२३)

मान्यवर, सादर नमस्ते।

आशा करता हूँ कि आप स्वस्थ सानन्द होंगे। आपको सुविदित है कि सद्‌भावी विद्वानों के सहयोग से सदा की भांति इस वर्ष भी ऋषि मेले के अवसर पर वेदगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। इस गोष्ठी में देश के अनेक भागों से पधारे प्रख्यात वैदिक विद्वान् निर्धारित विषयों पर अपने शोधपूर्ण विचार प्रस्तुत करते हैं। इनमें से चुने हुए शोध-पत्र **परोपकारी** व वेदपीठ की शोध-पत्रिका के माध्यम से प्रकाशित किये जाते हैं। जिससे जो लोग गोष्ठी में नहीं आ सकते हैं, वे भी इनसे लाभान्वित होते हैं। विद्वानों को भी इस विषय पर अधिक विचार करने का अवसर मिलता है। कोविड् के २ वर्षों को छोड़ गत ३५ वर्षों से गोष्ठी का आयोजन निरन्तर किया जा रहा है। इस बार वेदगोष्ठी के लिए निर्धारित विषय है:-

महर्षि दयानन्द का सामाजिक चिन्तन व वेद

उपशीर्षक :

०१. समाज की अवधारणा
०२. वैदिक समाज का स्वरूप
०३. समाज की आवश्यकता/अपरिहार्यता
०४. समाज का आरम्भ व विकास
०५. सामाजिक उन्नति का तात्पर्य
०६. जाति प्रथा व वर्ण
०७. समाज की वैदिकता
०८. अन्तर्जातीय सम्बन्ध व वर्ण संकरता
०९. विभिन्न आधुनिक व्यवसायों का भिन्न-भिन्न वर्णों में समावेश का निर्णय
१०. दलितों के प्रति समाज का कर्त्तव्य
११. महिलाओं के प्रति समाज के विशेष कर्त्तव्य, नियम-व्यवस्था
१२. विभिन्न वर्ण व आश्रम के व्यक्तियों के समान-असमान वर्ण व आश्रम के व्यक्तियों से व्यवहार की वेदानुकूल रीति।

इस विषय में महर्षि दयानन्द द्वारा जो प्रतिपादित किया गया है, उसके प्रमाणों का संग्रह और सिद्धान्तों की पुष्टि हो, यह इस गोष्ठी का उद्देश्य है। इसी आधार पर विषय का वर्गीकरण भी किया गया है। आप अपने विस्तृत अध्ययन के आधार पर इस विषय को प्रमाणों से पुष्ट करेंगे, ऐसा विश्वास है।

आप विद्वान् हैं। अतः आपसे निवेदन है कि गोष्ठी हेतु अपने विचार प्रेषित करें। आप कौन से उपविषयों पर प्रकाश डालने की इच्छा रखते हैं इसकी सूचना लौटती डाक से भेजने की कृपा करें। प्राप्त उत्कृष्ट लेख परोपकारी पत्रिका व पुस्तकाकार में प्रकाशित किए जाते हैं। प्रायः गोष्ठियों के लेख प्रकाशित हो चुके हैं। आप जिस विषय पर लिखना चाहें उसकी सूचना गोष्ठी के संयोजक को देने की कृपा करें। पिष्टपेषण न हो तथा विषय का सर्वांगीण विवेचन हो सके इसके लिए ऐसा करना आवश्यक है। लेख टाइप किए गए १० पृष्ठ से अधिक न हो। लेख में प्रस्तुत विचारों एवं तथ्यों के लिए महर्षि कृत ग्रन्थ व भाष्यों के प्रमाण अवश्य उद्धृत करें, प्रमाणों का पूरा पता दें। निबन्धों में आये सन्दर्भ ग्रन्थ एवं अन्य सामग्री की सूची शोध की स्पष्टता के लिए आवश्यक है। यदि आपके पास कम्प्यूटर की व्यवस्था है, तो अपना लेख, खुला (open file) हुआ ई-मेल से भेजें। पत्र/निबन्ध की भाषा हिन्दी या संस्कृत हो सकती है। लेख स्पष्ट रूप से कागज के एक ओर टाइप किया अथवा सुपाठ्य रूप में लिखा

होना चाहिए। वेद गोष्ठी में पढ़े गये सर्वश्रेष्ठ तीन शोध पत्र प्रथम, द्वितीय, तृतीय पुरस्कृत किये जायेंगे। निर्णायकों का निर्णय अन्तिम व सर्वमान्य होगा।

आपका सहयोग ही गोष्ठी की सफलता का आधार है। आपके सुझाव एवं मार्गदर्शन की प्रतीक्षा रहेगी। आप यदि किसी कारण से लेख लिखने में असमर्थ हों तो भी सूचित करने का कष्ट करें।

गोष्ठी में शोधपत्र प्रस्तुत करने के इच्छुक विद्वान्/शोधार्थी कृपया दिनांक ३१-१०-२०२३ तक अपने शोधपत्र (सार-संक्षेप सहित) आचार्य शक्तिनन्दन-९४९०४९२४९४ संयोजक, वेदगोष्ठी, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर को प्रेषित कर दें।

सादर।

उत्तराकांक्षी

मुनि सत्यजित्

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर।

पिछली वेद गोष्ठियों में अब तक निम्नलिखित विषयों पर विचार किया जा चुका है

०१. ऋषि दयानन्द की वेदभाष्य शैली	१९८८
०२. वेद और कर्मकाण्डीय विनियोग।	१९८९
०३. अथर्ववेद समस्या और समाधान।	१९९०
०४. वेद और विदेशी विद्वान्।	१९९१
०५. वैदिक आख्यानों का वास्तविक स्वरूप।	१९९२
०६. वेदों के दार्शनिक विचार।	१९९३
०७. सोम का वैदिक स्वरूप।	१९९४
०८. पर्यावरण समस्या का वैदिक समाधान।	१९९५
०९. वैदिक समाज व्यवस्था।	१९९६
१०. वेद और राष्ट्र।	१९९७
११. वेद और विज्ञान।	१९९८
१२. वेद और ज्योतिष।	१९९९
१३. वेद और पदार्थ विज्ञान	२०००
१४. वेद और निरुक्त	२००१
१५. वेद में इतिहास नहीं	२००२
१६. वेद में कृषि व वनस्पति विज्ञान	२००३
१७. वेद में शिल्प	२००४
१८. वेदों में अध्यात्म	२००५
१९. वेदों में राजनीतिक चिन्तन	२००६
२०. वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है	२००७
२१. वैदिक समाज विज्ञान	२००८
२२. सत्यार्थप्रकाश का ७ वाँ समुल्लास व वेद	२००९
२३. सत्यार्थप्रकाश का ८ वाँ समुल्लास व वेद	२०१०
२४. सत्यार्थप्रकाश का ९ वाँ समुल्लास व वेद	२०११
२५. महर्षिदयानन्दाभिमत मन्तव्य: वैदिक परिप्रेक्ष्य	२०१२
२६. वेद और सत्यार्थप्रकाश का १२वाँ समुल्लास	२०१३
२७. भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद	२०१४
२८. भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद	२०१५
२९. दयानन्द दर्शन की वेदमूलकता	२०१६
३०. वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त	२०१७
३१. षड्दर्शनों की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द	२०१८
३२. महर्षि दयानन्द की ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका और वेद	२०२१
३३. उपनिषद् वाङ्मय में ईश्वर चिन्तन	२०२२

(परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित)

योग–साधना एवं स्वाध्याय शिविर

(स्वामी विष्वङ्जी परिव्राजक के सान्निध्य में)

संवत् २०८०, कार्तिक कृष्ण प्रतिपदा से अष्टमी तक, तदनुसार २९ अक्टूबर से ०५ नवम्बर २०२३

इस योग-साधना शिविर में योग सम्बन्धी विषयों का वैदिक-दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे। **अन्य अध्यापक** - आचार्य सोमदेव जी, आचार्य कर्मवीर जी।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक शिविरार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।

२. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य-सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।

३. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।

४. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि-उद्यान परिसर में ही की जायेगी।

५. बाह्य-वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे- समाचार-पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखने आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।

६. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।

७. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन-सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।

८. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

९. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ- परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) कार्यालय से (०१४५-२९४८६९८, मो. ९३१४३९४४२१) से सम्पर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार अतिरिक्त भुगतान से की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं, शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गम्भीर रोग हो, तो कृपया शिविर

में आना स्थगित रखें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने-पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क २००० रु. मात्र जमा करना होगा। पृथक् कक्ष का शुल्क २००० रु. अतिरिक्त देय है। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारम्भ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है, क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर
दूरभाष : ०१४५-२९४८६९८, मो.नं. ९३१४३९४४२१

– : मार्ग : –

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेलवे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

---

yono SBI | SBI Payments

MERCHANT NAME : PROPKARNI SABHA
UPI ID : PROPKARNI@SBI

SCAN & PAY

BHIM
SBI Pay
BHIM UPI

सभा प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु

बैंक विवरण

खाताधारक का नाम
परोपकारिणी सभा, अजमेर
(PAROPKARINI SABHA AJMER)

बैंक का नाम
भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-
10158172715
IFSC - SBIN0031588

UPI ID : PROPKARNI@SBI

वैचारिक क्रान्ति के लिये सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

दम्पती शिविर के प्रशिक्षक मुनि सत्यजित् (मन्त्री - परोपकारिणी सभा अजमेर), मुनि ऋतमा,
आचार्य कर्मवीर आर्य, स्वामी विद्यानन्द एवं शिविरार्थीगण का सामूहिक चित्र।
(२४-२७ अगस्त २०२३, ऋषि उद्यान अजमेर)

आर जे/ए जे/80/2021-2023 तक   प्रेषण : १४-१५ सितम्बर २०२३   आर.एन.आई. ३९५९/५९